All Subject to Patiala Jurisdiction.

साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

मूल्य : 6/- रुपए

खेती संदेश

WEEKLY KHETI SANDESH

Postage Registered No. PB/PTA/0339/2025-2027

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

Chief Editor : Parminder Kaur • RNI Regd. No. PBBIL/25/A0210 • Issue Dt. 05-01-2026 • Vol.2 No.01 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • Mob. 90410-14575 • Page 12

भारत चावल उत्पादन में बना दुनिया का राजा

152 मिलियन मीट्रिक टन तक पहुंचा चावल का उत्पादन

चावल की बड़े पैमाने पर खेती और इसके निर्यात के मामले में चीन लंबे समय से आगे रहा है, लेकिन अब भारत सालों पुराने उसके दबदबे को खत्म कर खुद पहले नंबर पर आ गया है। दुनियाभर में चावल की जितनी भी खेती होती है, उसमें भारत की हिस्सेदारी 28 प्रतिशत से भी ज्यादा है।

यूनाइटेड स्टेट्स डिपार्टमैंट ऑफ एग्रीकल्चर (यू.एस.डी.ए.) ने भी भारत की इस उपलब्धि को माना है। अपनी दिसंबर 2025 की रिपोर्ट में यू.एस.डी.ए. ने कहा कि भारत में चावल का उत्पादन 152 मिलियन मीट्रिक टन तक पहुंच गया है, जबकि चीन का उत्पादन 146 मिलियन मीट्रिक टन है। इसी के साथ इस मामले में भारत दुनिया में 'चावल का राजा' बन बैठा है।

ताइवान ने की थी भारत की मदद

भारत में प्राचीन काल से चावल उगाया और खाया जाता रहा है। आज जब भी चावल उत्पादन की बात आती है, तो अकसर भारत का नाम सबसे पहले आता है। दुनिया में चावल की लगभग 1,23,000 किस्में हैं, जिनमें से लगभग 60,000 भारत में पाई जाती हैं। हालांकि, इसमें चीन के दुश्मन ताइवान के योगदान को नकारा नहीं जा सकता।

60 के दशक में जब भारत अन्न संकट से जूझ रहा था, तब ताइवान भारत की मदद के लिए आगे आया था। इसने सबसे पहले धान की अपनी प्रजाति ताइचुंग नेटिव-1 भारत को दी थी। इसके बाद 1968 में दूसरी किस्म आई.आर.-8 इरी दी। फिर देश के कृषि वैज्ञानिकों ने चावलों की इन प्रजातियों से हाइब्रिडाइजेशन करना शुरू किया। धीरे-धीरे आगे चल कर भारत चावल उत्पादन के मामले में आत्मनिर्भर बना।

फॉरेन पॉलिसी का हथियार बना चावल

जाने-माने एग्रोनॉमिस्ट डॉ. सुधांशु सिंह का कहना है कि दुनिया के सबसे बड़े चावल उत्पादक के रूप में भारत का उभरता एक बड़ी उपलब्धि है। भारतीय चावल 172 देशों में निर्यात किया जाता है और चावल भारत की विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण हथियार भी बन गया है।

2024-25 में भारत ने रिकॉर्ड 4,50,840 करोड़ रुपए के कृषि उत्पादों का एक्सपोर्ट किया, जिसमें चावल का हिस्सा सबसे ज्यादा लगभग 24 प्रतिशत था। बासमती और गैर-बासमती चावल का एक्सपोर्ट करके भारत ने एक साल में 1,05,720 करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा कमाई। यह भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए चावल के महत्व को दिखाता है।

हल्की बारिश से रबी फसलों को राहत

हरियाणा/पंजाब के कई जिलों में गत् दिनों हुई हल्की से मध्यम बारिश से जहां ठंड में इजाफा दर्ज किया गया, वहीं यह वर्षा किसानों के लिए राहत लेकर आई है। इसे रबी फसलों के लिए बेहद लाभकारी माना जा रहा है। किसानों के अनुसार, लंबे समय से सूखे मौसम के चलते गेहूं की फसल प्रभावित हो रही थी और रोगों का खतरा भी बढ़ गया था, लेकिन अब बारिश से तापमान में गिरावट आएगी जो गेहूं के लिए अनुकूल है।

किसानों ने बताया कि इस बारिश से गेहूं के साथ-साथ गन्ना, सरसों, हरा चारा, आलू और सब्जियों की फसलों को भी फायदा होगा। बिजली कटौती के कारण सिंचाई के लिए महंगे डीजल पर निर्भरता बढ़ गई थी, जिससे आर्थिक बोझ बढ़ रहा था। बारिश से सिंचाई की जरूरत कम होगी और सर्दियों की मक्का की बुवाई के लिए भी पर्याप्त नमी मिल सकेगी। इसके अलावा मौसम ठंडा होने से फसलों में लगने वाली मौसमी बीमारियों से भी राहत मिलने की उम्मीद है। कुल मिलाकर यह बारिश जहां लोगों के लिए ठंड बढ़ाने वाली है, वहीं किसानों के लिए इसे मौसम की सौगात माना जा रहा है।

शोधकर्त्ताओं की चेतावनी

2.5 अरब साल पहले बनी अरावली, 2029 तक खत्म हो जाएंगी ये पहाड़ियां!

अरावली पहाड़ियों की परिभाषा को लेकर उठे विवाद पर सुप्रीम कोर्ट ने स्वत: संज्ञान लिया है। अदालत ने स्पष्ट किया है कि अरावली से जुड़े उसके 20 नवम्बर के आदेश को अगली सुनवाई तक लागू नहीं किया जाएगा। यानी फिलहाल शीर्ष अदालत के निर्देशों पर रोक रहेगी। मामले की अगली सुनवाई 21 जनवरी, 2026 को होगी।

केन्द्र की नई परिभाषा को लेकर बढ़ी चिंता

केन्द्र सरकार द्वारा अरावली की नई परिभाषा तय किए जाने के बाद कई राज्यों में चिंता जताई जा रही है। आशंका है कि इससे पहाड़ियों के आस-पास खनन गतिविधियां बढ़ सकती हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि विवाद से पहले ही अरावली क्षेत्र खनन, शहरीकरण और कृषि गतिविधियों के कारण तेज़ी से क्षरण की ओर बढ़ रहा था।

अरावली पर्वत श्रृंखला के 2059 तक खत्म होने का डर

अरावली पर्वत श्रृंखला दुनिया की सबसे पुरानी पर्वत श्रृंखलाओं में से एक है, जिसका निर्माण लगभग 2.5 अरब साल पहले हुआ था। शोध में चेतावनी दी गई है कि वर्ष 2059 तक मानव बस्तियों के विस्तार के कारण करीब 16,360 वर्ग किलोमीटर वन क्षेत्र समाप्त हो सकता है। यह अध्ययन राजस्थान के केन्द्रीय विश्वविद्यालय के पर्यावरण विज्ञान विभाग द्वारा 1975 से 2019 के सैटेलाइट के आधार पर किया गया।

अध्ययन के नतीजे काफी चिंताजनक

अध्ययन के अनुसार, 44 वर्षों में लगभग 5,772 वर्ग किलोमीटर वन क्षेत्र खत्म हो चुका है, जबकि हज़ारों वर्ग किलोमीटर भूमि बंजर और आबादी में बदल गई। शोधकर्ताओं ने चेताया है कि यदि मौजूदा रुझान जारी रहे, तो आने वाले दशकों में अरावली का पारिस्थितिक संतुलन गंभीर रूप से प्रभावित होगा।

ठोस कदम नहीं उठाए, तो अरावली का भविष्य खतरे में

विशेषज्ञों का कहना है कि अरावली राजस्थान, हरियाणा, दिल्ली और गुजरात के लिए जलवायु ढाल की तरह काम करती है। बड़े पैमाने पर वन क्षेत्र के नुकसान से जल संरक्षण, जैव विविधता और लोगों की आजीविका पर गहरा असर पड़ सकता है। यह अध्ययन नीति-निमार्ताओं के लिए चेतावनी है कि समय रहते ठोस कदम नहीं उठाए गए, तो अरावली का भविष्य खतरे में पड़ सकता है।

खाद्य सुरक्षा के लिए जरूरी है अरावली का वजूद

एक अरब साल से भी ज्यादा पुरानी अरावली पहाड़ियों ने उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र के रेगिस्तान बनने के विरुद्ध एक हरी दीवार का काम किया है। ये पहाड़ियां समृद्ध जैव विविधता का भंडार भी हैं; ये ज़मीन के नीचे के जलभंडारों की भरपाई करने में अहम् भूमिका निभाती हैं और इन्होंने दिल्ली, हरियाणा और उत्तर प्रदेश में रेगिस्तान की आगे बढ़ने की चाल को रोका है।

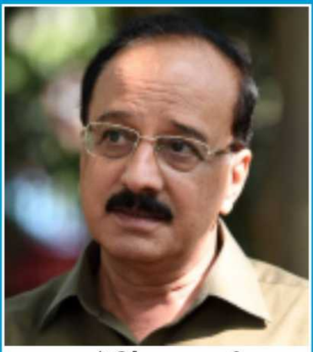

देविंदर शर्मा

वर्ष 2021 की हॉलीवुड व्यंग्य फिल्म 'डोंट लुक अप' में, दो अमेरिकी खगोलशास्त्री दुनिया को एक धूमकेतु के बारे में चेतावनी देते हैं, जो पृथ्वी की ओर तेज़ी से बढ़ रहा है। हालांकि, अमेरिकी राष्ट्रपति एक अरबपति के झांसे में आ जाते हैं, जो यह दावा करता है कि उस आकाशीय पिंड में खरबों डॉलर के दुर्लभ तत्व हैं। आखिरकार, धूमकेतु पृथ्वी से टकराता है, जिससे एक वैश्विक आपदा बनती है।

काश! फिल्म के मुख्य किरदारों ने प्राकृतिक संसाधनों की लूट के भयानक परिणामों के बारे में संज्ञान लिया होता, जैसा कि उत्तर भारत के 'हरे फेफड़े' पुकारी जाने वाली और पर्यावरण सुरक्षा के लिए अति संवेदनशील किंतु क्षतिग्रस्त की जा चुकी अरावली पर्वत श्रृंखला की प्रस्तावित 100 मीटर की परिभाषा से साफ था, तो फिल्म का शीर्षक 'डोंट लुक अप, लुक डाउन' होता। यह वही है, जिसकी चेतावनी महात्मा गांधी ने यह कहकर दी थी, "दुनिया में हर किसी की जरूरत के लिए काफी है, लेकिन हर किसी के लालच के लिए नहीं।"

कई साल पहले, मैं हिमाचल प्रदेश के बिलासपुर ज़िले में गोविंद सागर जलाशय के ऊपर हिमालय की नाजुक पहाड़ियों में चूना पत्थर की खुदाई पर रिपोर्टिंग करने गया था। एक सीमेंट कंपनी धीरे-धीरे, परत-दर-परत, चूना पत्थर वाली पहाड़ी को खुरच रही थी। जब मैंने कंपनी के महाप्रबंधक से पूछा कि क्या उन्हें अहसास है कि पहाड़ी को समतल करने से गंभीर पारिस्थितिक नुकसान होगा, तो उनके जवाब में आमतौर पर हावी मानसिकता झलक रही थी, "जब पहाड़ी ही नहीं रहेगी, तो आप किस पारिस्थितिक नुकसान की बात कर रहे हैं?"

हालांकि, इसका मतलब यह नहीं है कि प्राकृतिक संसाधनों के दोहन पर आधारित सभी विकास गतिविधियां बंद कर देनी चाहिए। इसका अर्थ सिर्फ यह है कि मुख्य आवश्यक तत्वों के अत्याधिक खनन के गंभीर पर्यावरणीय परिणाम होते हैं और इसके लिए सख्त नियमों के अलावा प्रकृति द्वारा प्रदत्त पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं के आर्थिक मूल्यांकन की भी जरूरत है। इसके सामाजिक प्रभाव भी होते हैं, जिसके लिए कोई माप-सूत्र मौजूद नहीं है। ऐसे में, अगर नीति-निर्माताओं को गलती करनी भी पड़े, तो उन्हें लोगों और पर्यावरण के हित में गलती करनी चाहिए। इसी तरह, जब हिमालय के ग्लेशियर पिघलने लगे, तब तक ऐसा कथानक गढ़ने की कोशिश की गई, जो इन दावों को चुनौती दे रहा था, जिसमें इस घटनाक्रम को जलवायु आपदा गया था। भगवान का शुक्र है कि अब दुनिया पिघलते ग्लेशियरों के विनाशकारी परिणामों के प्रति जाग गई है। ग्लोबल वार्मिंग से आगे बढ़ कर, दुनिया पहले ही, ग्लोबल बॉइलिंग स्टेज में प्रवेश कर चुकी है। इसका मतलब है पहाड़ियों और जंगलों का अंधाधुंध दोहन, जो दुनिया को सिर्फ जलवायु आपदा की ओर धकेलेगा।

चार राज्यों - गुजरात, राजस्थान, हरियाणा और दिल्ली के 37 ज़िलों में 1.44 लाख वर्ग किलोमीटर में फैली अरावली पहाड़ियों में सीसा, जस्ता, चांदी, तांबा और बेशक, संगमरमर जैसे मुख्य खनिजों का भरपूर भंडार है। इसके अलावा, ये पहाड़ियां लिथियम, निकेल, मोलिब्डेनम, नाइओबियम और टिन जैसे जरूरी खनिजों से भी भरपूर हैं। जैसे 'डोंट लुक अप' में अमेरिकी राष्ट्रपति को यह विश्वास दिलाया गया था कि धूमकेतु की आर्थिक संपति बहुत ज्यादा दौलत लाएगी, वैसे ही यह माना जा रहा है कि अरावली में मौजूद खनिज देश के आर्थिक विकास के लिए जरूरी है। अगर ऐसा है, तो मुझे नहीं पता कि इतने बड़े पैमाने पर 'सेव अरावली' विरोध प्रदर्शन क्यों हो रहे हैं। क्या लोग खनिज संपदा की आर्थिक कीमत नहीं समझते, जिसे किसी भी कीमत पर निकालना जरूरी है?

एक अरब साल से भी ज्यादा पुरानी अरावली पहाड़ियों ने उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र के रेगिस्तान बनने के विरुद्ध एक हरी दीवार का काम किया है। ये पहाड़ियां समृद्ध विविधता का भंडार भी है, ये ज़मीन के नीचे के जलभंडारों की भरपाई करने में अहम् भूमिका निभाती है और इन्होंने दिल्ली, हरियाणा और उत्तर प्रदेश में रेगिस्तान की आगे बढ़ने की चाल को रोका है। लेकिन अरावली पट्टी में इंसानी दखल और विकास प्रक्रिया के कारण वन्यजीवों के आवासों और स्थानीय आजीविका को पहले ही बहुत नुकसान हो चुका है। जैसे-जैसे रेगिस्तान फैल रहा है, देश की कड़ी मेहनत से हासिल की गई खाद्य सुरक्षा खतरे में पड़ रही है।

फरवरी, 2025 में संसद को बताया गया कि भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन द्वारा तैयार किए गए 2021 के भारत के मरुस्थलीकरण और भूमि क्षरण मानचित्र के अनुसार, रेगिस्तान तेज़ी से अन्न पैदा करने वाली कृषि भूमि की ओर बढ़ रहा है। पहले से ही, हरियाणा में 3.64 लाख हैक्टेयर से ज्यादा, पंजाब में 1.68 लाख हैक्टेयर और उत्तर प्रदेश में 1.54 लाख हैक्टेयर भूमि क्षरण और मरुस्थलीकरण की चपेट में आ चुकी है। एक बार अरावली का स्वरूप नई परिभाषा के अनुसार बन गया तो भूमि क्षरण और भी तेज़ हो जाएगा। इससे तेज़ गर्म हवा, बार-बार धूल भरी आंधियां, बढ़ते तापमान का रास्ता खुल जाएगा। इसके साथ खेती के कारण गहरे ज़मीनी पानी खत्म होने से, मिट्टी का कटाव और तेज़ होगा, जिससे कृषि भूमि की गुणवत्ता खराब हो जाएगी।

जहां अरावली को लेकर प्रस्तावित नए मानकों पर बहस खनन और पर्यावरण पर केन्द्रित है, वहीं लंबी अवधि की खाद्य सुरक्षा के लिए उभरता खतरा नज़र-अंदाज किया जा रहा है। मरुस्थलीकरण से निपटने के लिए संयुक्त राष्ट्र अधिवेशन ने चेतावनी दी है कि मरुस्थलीकरण मिट्टी की उर्वरता को गंभीर नुकसान पहुंचाता है, जिससे उपजाऊ ज़मीनें अर्धशुष्क हो जाती हैं। निश्चित रूप से, मरुस्थलीकरण इतना गंभीर मुद्दा है कि इसे सिर्फ दावों और वादों तक सीमित नहीं रखा जा सकता। एक नई प्रबंधन योजना को लागू करने और 'मज़बूत सुरक्षा' के वादे अब पर्याप्त सुरक्षा उपाय नहीं है।

नि:संदेह, अरावली की पहाड़ियां महज रणनीतिक खनिजों के लिए एक प्राकृतिक भंडार नहीं है, वे बड़े पैमाने पर पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं भी प्रदान करती हैं। प्रकृति प्रदत्त इन पारिस्थितिक और पर्यावरणीय सेवाओं की वास्तविक आर्थिक लागत का पता नहीं लगाया गया है। एक बार जब यह मोल पता चल जाएगा, तो राष्ट्र को पहाड़ियों को बरकरार रखने की आर्थिक आवश्यकता का अहसास होगा, भले ही खनिजों को निकालने की आर्थिक लागत पर ज्यादा ज़ोर दिया जाता है।

'द इकोनॉमिक्स ऑफ इकोसिस्टम सर्विसेज ऑफ बायोडायवर्सिटी' के मानदंडों के अनुसार अगर राष्ट्रीय लेखा-जोखा में धार्मिक रूप से महत्वपूर्ण कैलास पर्वत और डल झील को आर्थिक मूल्य दिया जा सकता है, तो दुनिया की सबसे पुरानी पर्वत श्रृंखलाओं में से एक अरावली के लिए भी, इसी प्रकार का लागत-लाभ विश्लेषण किया जाना चाहिए।

लेखक कृषि एवं खाद्य संबंधी विषयों के विशेषज्ञ हैं।

गीत

नए साल पर

जुग-जुग जीवे भारत प्यारा सब को साल मुबारक।
सागर धरती अम्बर सारा सब को साल मुबारक।
देश विदेशों में बैठे मेहनतकार जवानों।
हरियाली खुशहाली देवे सिर पर प्यार जवानों।
धरती को चुमे उजियारा सब को साल मुबारक।
जुग-जुग जीवे भारत प्यारा सब को साल मुबारक।
बीच सियासत शक्ति भक्ति शुद्ध बुद्धि आ जाए।
धर-घर आधुनिक यंत्र आएं विकसित देश कहाए।
शुभ तिरंगे का है नारा सब को साल मुबारक।
जुग-जुग जीवे भारत प्यारा सब को साल मुबारक।
सब धर्मों की एक ईकाई दूजे के काम आना।
तांकि दीपक जगमग चमके तेल निरंतर पाना।
इसके बिन नहीं कोई चारा सब को साल मुबारक।
जुग-जुग जीवे भारत प्यारा सब को साल मुबारक।
इस की सुन्दर कलगी अन्दर शोभित है कुर्बानी।
नवयुग परिवर्तन की प्रबल लौकिक प्रीत कहानी।
जनवादी नवनीत नजारा सब को साल मुबारक।
जुग-जुग जीवे भारत प्यारा सब को साल मुबारक।
धर्म-कर्म की श्रद्धा होवे परिश्रम भीतर सृजन।
संपूर्णता में उमंगे समतव होवे आर्पण।
झुग्गी-झोंपड बीच नजारा सब को साल मुबारक।
जुग-जुग जीवे भारत प्यारा सब को साल मुबारक।
मानवता की ज्योति प्रज्वलित विभन्न शब्दों अन्दर।
पूजा अर्चन बीच सुगंधी होवे अनुपम मंजर।
मन्दिर मस्जिद एंव गुरूद्वारा सबको साल मुबारक।
जुग-जुग जीवे भारत प्यारा सब को साल मुबारक।
शुभ इच्छाएं शुभआसीसें मालिक सब को देवे।
एक गुलदस्ता, जलते दीपक, थाल में गुड़ एवं मेवे।
बालम गीतों का बंजारा
सब को साल मुबारक।
जुग-जुग जीवे भारत प्यारा
सब को साल मुबारक।

बलविंदर बालम
ओंकार नगर, गुरदासपुर पंजाब
मो. 98156-25409

सरसों की फसल पर पाले और रोगों का खतरा

कृषि वैज्ञानिक ने किसानों के लिए जारी की विशेष सलाह

उत्तर भारत में बढ़ते पाले और घने कोहरे के कारण सरसों की फसल पर संकट के बादल मंडराने लगे हैं। अत्यधिक नमी और गिरते तापमान की वजह से सरसों में सफेद रतुआ, तना गलन, अल्टरनेरिया ब्लाइट और फूलिया/मृदुरोमिल आसिता/डाउनी मिल्ड्यू जैसी बीमारियों का खतरा बढ़ गया है। कृषि विज्ञान केन्द्र, हाथरस (उत्तर प्रदेश) के वैज्ञानिक डॉ. बलवीर सिंह ने किसानों को इस संबंध में सतर्क रहने और समय रहते बचाव के उपाय अपनाने की सलाह दी है।

पाले से बचाव के लिए अपनाएं ये तरीके

डॉ. बलवीर सिंह के अनुसार, घना कोहरा और पाला सरसों की फसल को भारी नुकसान पहुंचा सकता है। इससे बचाव के लिए किसान भाई निम्नलिखित उपाय कर सकते हैं :

हल्की सिंचाई : खेत में नमी बनाए रखने के लिए हल्की सिंचाई करें। नमी होने से मिट्टी का तापमान स्थिर रहता है और पाले का असर कम होता है।

यूरिया का छिड़काव : पाले के प्रभाव को कम करने के लिए 1 प्रतिशत यूरिया के घोल का छिड़काव करें।

सल्फर (गंधक) का प्रयोग : सल्फर के छिड़काव से पौधों में आंतरिक गर्मी बढ़ती है और उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार होता है। अत्यधिक ठंड की स्थिति में 1000 लीटर पानी में 1 लीटर गंधक का तेजाब और आधा लीटर 'डाईमिथाइल सल्फो ऑक्साइड' मिलाकर छिड़काव करना अत्यंत प्रभावी रहता है।

500 ग्राम थायो यूरिया को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

पोटाश और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी न होने दें। ये तत्व पौधों की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाते हैं।

प्रमुख रोगों का उपचार

फसल में रोगों के लक्षण दिखते ही किसानों को तुरंत कार्रवाई करनी चाहिए :

अल्टरनेरिया ब्लाइट और सफेद रतुआ : इन बीमारियों के लक्षण नजर आते ही 600 ग्राम मैंकोजेब डाइथेन या इंडोफिल एम-45 को 250 से 300 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें। बेहतर परिणाम के लिए 15 दिन के अंतराल पर 3 से 4 बार छिड़काव करें।

तना गलन रोग : जिन क्षेत्रों में यह रोग बार-बार होता है, वहां बिजाई के 45-50 दिन और 65-70 दिन बाद कार्बेन्डाजिम का 0.1 प्रतिशत की दर से दो बार छिड़काव करें।

मधुमक्खियों की सुरक्षा और दवाओं के बेहतर असर के लिए सरसों की फसल में रसायनों का छिड़काव हमेशा शाम के समय ही करें। किसान भाई किसी भी अन्य जानकारी के लिए कृषि विज्ञान केंद्र से संपर्क कर सकते हैं।

दिल्ली प्रदूषण : पर्यावरण नहीं स्वास्थ्य की समस्या बन चुका है

दिल्ली की हवा अब केवल प्रदूषित नहीं है, यह हमारे समय की सबसे बड़ी चुपचाप फैलती हुई आपदा बन चुकी है। हर सर्दी में जब स्मॉग की मोटी परत राजधानी को ढक लेती है, मान लेते हैं कि समस्या टल गई। लेकिन सच यह है कि समस्या कहीं नहीं जाती, वह हमारे फेफड़ों में जमा होती रहती है। दिल्ली में प्रदूषण कई स्त्रोतों से पैदा हुआ एक सम्मिलित संकट है। वाहनों की बात करें तो दिल्ली-एन.सी.आर. में पंजीकृत वाहनों की संख्या 1.2 करोड़ से अधिक है। इनमें से बड़ी संख्या डीज़ल आधारित है, जो पी.एम. 2.5 और नाइट्रोजन ऑक्साइड जैसे घातक प्रदूषक छोड़ती है। इसके अलावा रोज़ाना लगभग 10-12 लाख वाहन दिल्ली में बाहर से प्रवेश करते हैं। यही वजह है कि सड़क परिवहन दिल्ली के कुल प्रदूषण में लगभग 30 प्रतिशत तक योगदान देता है।

निर्माण गतिविधियां दूसरा बड़ा कारण हैं। दिल्ली एक ऐसा शहर बन चुका है, जो लगातार खुद को तोड़ कर फिर से बना रहा होता है। फ्लाईओवर, मैट्रो विस्तार, हाऊसिंग प्रोजैक्ट्स और व्यावसायिक परिसरों के कारण उड़ने वाली धूल पी.एम. 10 का प्रमुख स्त्रोत है। केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के आंकड़ों के अनुसार, शहरी धूल दिल्ली के प्रदूषण में लगभग 15-20 प्रतिशत तक योगदान देती है।

इस क्रम में औद्योगिक प्रदूषण को अक्सर नजर-अंदाज कर दिया जाता है। दिल्ली और आस-पास के क्षेत्रों में हज़ारों छोटी औद्योगिक इकाईयां हैं, जो कोयला, फर्नेस ऑयल और अन्य प्रदूषणकारी ईंधनों का इस्तेमाल करती हैं। ईंट भट्टे, प्लास्टिक जलाना, अवैध फैक्ट्रियां और कचरे का खुले में दहन-ये सब मिल कर हवा को और ज़हरीला बनाते हैं। उद्योग और ऊर्जा उत्पादन से जुड़े स्त्रोत दिल्ली के प्रदूषण में लगभग 15 प्रतिशत तक हिस्सेदारी रखते हैं। इन सबके बीच पराली जलाने का मुद्दा हर साल चर्चा के केन्द्र में आता है। वैज्ञानिक अध्ययनों के अनुसार अक्तूबर-नवम्बर के दौरान दिल्ली के प्रदूषण में पराली का योगदान औसतन 20 से 35 प्रतिशत के बीच रहता है। कुछ चरम दिनों में, जब हवा की दिशा प्रतिकूल होती है, यह योगदान 40 प्रतिशत तक भी पहुंच जाता है। लेकिन यह भी उतना ही बड़ा सच है कि साल के बाकी महीनों में, जब पराली नहीं जलाई जाती, तब भी दिल्ली की हवा खराब ही रहती है। इससे साफ है कि पराली एक अहम कारण है, लेकिन उसे ही पूरे संकट का दोषी ठहराना एक आसान लेकिन अधूरा है।

No. 1
RURAL WEEKLY

Now Think Before Advertising
KHETI DUNIYAN RETAINS
LEADERSHIP
IN
READERSHIP

KHETI DUNIYAN
VOICE OF THE FARMERS

KD COMPLEX, GAUSHALA ROAD, NEAR SHER-E-PUNJAB MARKET, PATIALA-147001 (PB.) INDIA
Mob. 90410-14575
khetiduniyan1983@gmail.com

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9—ए, अजीत नगर,
पटियाला—147001
(पंजाब)
मो. 98151—04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला—147001
(पंजाब)
मो. 90410—14575

वर्ष : 02 अंक : 01
तिथि : 05-01-2026

सम्पादक
परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड
डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly
'KHETI SANDESH' Printed at **Drishti Printers**,
Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market,
Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and
published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar,
Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com
Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

पंगास मछली पालन तकनीक

डॉ. रणजीत सिंह, लवदीप शर्मा एवं तनुजा पाण्डेय, मत्स्य विज्ञान महाविद्यालय,
गोविन्द बल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पन्तनगर, ऊधम सिंह नगर (उत्तराखंड)

बीज उत्पादन :

ब्रूडस्टॉक प्रबंधन : मछली तालाबों से एकत्र की गई व्यस्क मछलियों को 5–10 टन प्रति हैक्टेयर की दर से 0.1–0.4 हैक्टेयर आकार के मिट्टी के तालाबों में रखा जाता है। व्यस्क मछलियों को प्रति दिन दो बार 1 प्रतिशत शारीरिक वज़न के हिसाब से भोजन दिया जाता है। यह भोजन तैरते हुए पैलेटेड फीड जिसमें प्रोटीन की मात्रा लगभग 35 प्रतिशत होनी चाहिए, दिया जाता है। प्रजनन के तीन माह पहले नर और मादा मछलियों को अलग–अलग तालाबों में रखा जाता है और 1 प्रतिशत विटामिन प्रीमिक्स युक्त चारा प्रदान किया जाता है। नर मछली प्रथम वर्ष में ही यौवन प्राप्त कर लेता है, जबकि मादा 1–2 वर्ष में परिपक्व होती है, जोकि प्रकाश आवधिक चक्र पर निर्भर करती है।

स्पॉनिंग : आमतौर पर स्पॉनिंग मौनसून के मौसम में होती है। प्रजनन के मौसम से ठीक पहले नर एवं मादा को देख कर अलग–अलग किया जा सकता है। परिपक्व मादा का पेट फूला हुआ एवं नरम होता है और जननांग लाल–गुलाबी रंग का हो जाता है, जबकि नर का जननांग लाल रंग का होता है और उसके पेट को दबाने से सफेद रंग का द्रव्य निकलता है।

परिपक्व मछली को सिंथेटिक हार्मोन जैसे कि Wova-FH का इंजेक्शन देकर अंडे देने के लिए प्रेरित किया जाता है, जिसकी एकल खुराक मादा के लिए 2 मिलीलीटर प्रति किलोग्राम वज़न दिया जाता है। इंजेक्शन लगाने के बाद मछलियों को प्रजनन तालाब में छोड़ दिया जाता है और 5–6 घंटे के बाद नर और मादा से क्रमशः अण्डे और सफेद द्रव स्ट्रीपिंग तरीके से निकाल लिया जाता है। सामान्यतः मछली एक मौसम में दो बार अण्डे देती है और एक मछली लगभग 4–6 लाख प्रति किलोग्राम शरीर के वज़न के हिसाब से अण्डे देती है। निषेचित अण्डा गोल, पारदर्शी एवं चिपचिपा होता है। चिपचिपापन दूर करने के लिए टैनिन, स्किम्ड मिल्क पाउडर अथवा दूध का घोल (7 मिलीलीटर दूध प्रति लीटर पानी) उपयोग किया जाता है। निषेचित अण्डों को साफ पानी से 3–4 बार धोया जाता है तथा हल्के वातन के साथ उष्मायन के लिए रखा जाता है।

पैंगेसियस कैटफिश, एक विदेशी ताज़े पानी की मछली है, जिसे भारत में 90 के दशक के दौरान लाया गया था। यह सर्वाहारी, प्रारंभिक चरण में यह शैवाल, जलप्लवक और कीड़ों को खाती है, जबकि व्यस्क क्रस्टेशियंस और मछली पर निर्भर होते हैं।

इन्क्यूबेशन : निषेचित अण्डों को गोल तले वाले शंक्कराकार आकार के पारदर्शी जार, जिसकी क्षमता 25–30 लीटर हो, में इन्क्यूबेटर किया जाता है, जिसमें लगभग एक लीटर निषेचित अंडे या 7.5 लाख अण्डे रखे जा सकते हैं। अण्डों को पानी के ऊपरी प्रवाह के साथ रखा जाता है तथा जल प्रवाह को नियंत्रित किया जाता है। आमतौर पर 28–30 डिग्री सैल्सियस तापमान पर अण्डा 22–26 घंटों में फुट जाता है और प्रस्फुटन दर लगभग 40–60 प्रतिशत होती है। लगभग निषेचन के 72 घंटों उपरान्त हैचलिंग को जार के माध्यम से एकत्र कर लिया जाता है। स्वतः भक्षण से बचने के लिए हैचलिंग को नर्सरी तालाब में स्थानांतरित कर दिया जाता है।

नर्सरी पालन : 0.1–0.4 हैक्टेयर आकार का मिट्टी तालाब नर्सरी के लिए आदर्श है। नर्सरी तालाब तैयार करने के पश्चात् पानी को छान कर भर दिया जाता है तथा प्राकृतिक प्लवक उत्पादन बढ़ाने के लिए 2000 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर गाय का गोबर, 300 किलोग्राम हैक्टेयर मूंगफली के तेल की खली और 75 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर सुपर फास्फेट मिला कर डालें। मछली लार्वा को नर्सरी तालाब में 100–125 प्रति मीटर की दर से डालते हैं। मछली लार्वा को नर्सरी तालाब में स्थानांतरण करने में कोई भी देरी सामूहिक मृत्यु दर को बढ़ावा देती है।

पैकिंग एवं परिवहन : मछली के बीजों को पानी का स्तर कम करने के उपरान्त सीन नेट का उपयोग करके निकालते है। बीजों को निकालते समय सावधानी बरतनी चाहिए क्योंकि यह अत्याधिक तापमान संवेदनशील होते हैं। मछली के बीजों को बंद लिफाफे में स्थानांतरण करने की तुलना में खुले कंटेनर में स्थानांतरण को प्राथमिकता दी जाती है।

तालाबों में अर्ध गहन खेती :

1. तालाब निर्माण : 0.05–2 हैक्टेयर आकार की मिट्टी का तालाब 1–2 मीटर की गहराई के साथ आदर्श माना जाता है। तालाब को ऊपर से 50 मिलीमीटर जाल के साथ कवर किया जाता है तथा तालाब को चारों तरफ से 26 मिलीमीटर जाल से बाढ़ किया जाता है, ताकि बाहरी जीवों से सुरक्षा प्रदान की जा सके।

2. तालाब की तैयारी : तालाब को पूरी तरह सुखा दिया जाता है, ताकि दरारें विकसित हो जाएं और ज़हरीली गैसों को हटाने के लिए ब्लीचिंग पाऊडर 35 पी.पी.एम. की दर से उपयोग किया जाता है। तालाब में

पानी इनलेट के माध्यम से प्रवेश करता है तथा मछली और अन्य जीवों के प्रवेश को रोकने के लिए एक महीन जालीदार जाल के साथ तालाब को ढक दिया जाता है और प्रारंभ में 50 सैंटीमीटर जल स्तर बनाए रखते हैं। प्राकृतिक उत्पादन बढ़ाने के लिए तालाब में गाय का गोबर 4000 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर के हिसाब से मछली के बीज डालने से 10–15 दिन पहले डालें।

3. संग्रहण : मछली के बीजों को अनुकूलन के उपरान्त 8 सैंटीमीटर के एकसमान आकार के बीजों को 2 महीने की अवधि के लिए शरीर के वज़न के 5 प्रतिशत पर पैलेट फीड के साथ संग्रहण किया जाता है। मछली के बीजों को तब तक 5 प्रतिशत भोजन दिया जाता है, जब तक कि वह 15-20 ग्राम वज़न के नहीं हो जाते। स्वभक्षण रोकने के लिए मछलियों को वर्गीकृत किया जाता है तथा 15-20 ग्राम की अंगुलिकाओं को 2-3 प्रति मीटर की दर से संग्रहित किया जाता है।

4. आहार : यह मछली सर्वाहारी है, जोकि पानी के पूर स्तंभ को उपयोग करती है तथा घरेलू भोजन के अवशेष, चावल की भूसी, मूंगफली की खली और कृत्रिम पैलेटड आहार को स्वीकार करती है। इस मछली के भोजन में प्रोटीन की मात्रा लगभग 20-28 प्रतिशत होनी चाहिए। मछली को प्रति दिन दो बार आहार प्रदान किया जाता है। आहार की मात्रा 6 प्रतिशत शरीर के वज़न की दर से शुरूआती दिनों में खिलाया जाता है तथा उत्पादन के अंत में यह मात्रा 1 प्रतिशत कर दी जाती है।

5. देखभाल एवं रख-रखाव : तालाब के पानी को 15 दिन की अवधि के उपरान्त 10-20 प्रतिशत बदल दिया जाता है। पानी में ऑक्सीजन की मात्रा को बनाए रखने के लिए 2 एच. पी. क्षमता के दो पैडल-व्हील एरेटर प्रति हैक्टेयर के हिसाब से लगाए जाते हैं। मासिक दर से जाल चला कर मछली के विकास एवं बीमारियों का पता लगाया जाता है।

6. संचयन : यह मछली 8-10 महीनों में 2 किलो वज़न प्राप्त कर लेती है। 6 माह के पश्चात् बड़ी मछलियों को निकाल देना चाहिए, ताकि वो छोटी मछलियों के विकास को प्रभावित न करें। मछलियों के संचयन से 2-3 दिन पहले उन्हें भूखा रखना चाहिए, इससे उनके मांस की गुणवत्ता में सुधार होता है। यह मछली 30 से 50 टन प्रति हैक्टेयर की दर से उत्पादन दे सकती है।

चने के प्रमुख रोग व कीट एवं उनका प्रबंधन

लक्ष्मण प्रसाद बलाई, सहायक प्रोफैसर, एस.के.एन. कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर; **सागर मल खारड़िया,** रिसर्च स्कॉलर व **अर्जुन कुमार वर्मा,** एसोसिएट प्रोफैसर, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

भारत चना के उत्पादन में प्रथम स्थान पर है तथा कुल उत्पादन का 65 प्रतिशत (9 मिलियन टन) भारत में उत्पादित किया जाता है। चना दलहनी फसलों में प्रमुख स्थान रखता है, क्योंकि दलहनी फसलों के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्रफल का 27 एवं कुल पैदावार का 33 प्रतिशत हिस्सा चने से प्राप्त होता है। दलहनी फसलें प्रोटीन का प्रमुख स्त्रोत हैं। कुल उत्पादन का 28 प्रतिशत भाग उपज देकर दलहन देश में प्रथम स्थान पर है। दलहनी फसलें भूमि में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा को बढ़ाती है। इसके अलावा दलहनी फसलों की जड़ों में पाई जाने वाली गांठों के द्वारा वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण होता है, जिससे भूमि में उपलब्ध नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ जाती है। एक हैक्टेयर दलहनी फसल औसतन 15-25 किलोग्राम नाइट्रोजन को भूमि में स्थिर करती है। इस प्रकार प्राकृतिक साधनों का अधिकतम दोहन कर फसलोत्पादन की वृद्धि में सहायक सिद्ध होती है। वर्तमान में एकीकृत पौध पोषण पर विशेष बल दिया जा रहा है। कीट व रोग चने के उत्पादन पर विपरीत प्रभाव डालते हैं, जो निम्नलिखित हैं।

चने के रोग एवं प्रबंधन :

चने का स्क्लेरोशियम रॉट या कॉलर रॉट रोग : चने की फसल में इस रोग का बहुत अधिक प्रकोप पाया जाता है। यह रोग मुद्रा जनित: फफूंद *स्क्लेरोशियम रोल्फसाई* से उत्पन्न होता है। सामान्यत: धान या खरीफ की अन्य फसलों के बाद जिन खेतों में चना लगाया जाता है, उन खेतों में यह रोग अधिक फैलता है।

लक्षण : इस रोग के लक्षण बुवाई के दो सप्ताह से लेकर लगभग छ: सप्ताह तक दिखाई पड़ते है। इस रोग के कारण पत्तियां पीली पड़ने लगती हैं और धीरे-धीरे पूरा पौधा सूख कर मर जाता है।

रोगी के इस संक्रमित भाग पर कपास के समान रेशेदार रचना (फफूंद के कवकजाल) दिखाई पड़ते हैं व कहीं-कहीं इन ग्रसित भागों पर राई के दाने के समान फफूंद के स्कलराशियम भी दिखाई देते हैं। नये व छोटे पौधों में रोग आक्रमण से वे नीचे गिर जाते हैं, जबकि बड़े पौधों में संक्रमण होने पर वे गिरते नहीं, सूख कर मर जाते हैं।

रोग प्रबंधन :

* पिछली फसल के सड़े-गले अवशेष खेत में नहीं छोड़ने चाहिए।

* बुवाई और अंकुरण के समय मृदा में अधिक नमी नहीं होनी चाहिए।

* मई-जून में खेत को गहरा जोत कर छोड़ देना चाहिए।

* फसल-चक्र अपनाने से इस रोग को कम किया जा सकता है।

* खेत में गोबर की खाद 5 टन प्रति हैक्टेयर की दर से मिलाने से इस रोग के बीजाणु कम हो जाते हैं।

* बुवाई से पहले बीज का उपचार अवश्य करें। टेबुकोनाज़ोल कवकनाशी 0.2 ग्राम प्रति 10 किलोग्राम बीज की दर से या टेबुकोनाज़ोल 15 प्रतिशत + ज़िनेब 57 प्रतिशत डब्ल्यू.डी.जी. 2 ग्राम प्रति किलोग्राम या टेबुकोनाज़ोल कवकनाशी और ट्राईकोडरमा (1:4) के अनुपात या बेसिलस सबटिलिस 10 ग्राम में मिला कर प्रति किलोग्राम की दर से उपचार करें।

* बुवाई व अंकुरण के समय खेत में अधिक नमी नहीं होनी चाहिए।

चने का उखटा रोग : यह रोग चने बीज तथा मृदा जनित फफूंद *फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरियन स्पीसीज़ साइसरी* से होता है। इस रोग को फल की किसी भी अवस्था में देखा जा सकता है। सामान्यत: यह रोग 10 से 15 प्रतिशत तक उपज में कमी करता है। रोग ग्रसित पौधों से प्राप्त बीजों को काम में लेने पर भी यह रोग फैलता है।

लक्षण : यह रोग तीन सप्ताह से लेकर फसल पकने की अवस्था तक दिखाई देता है। रोग का आरम्भ खेत के कुछ भाग में पौधों में पीलापन दिखाई देने से होता है। इस रोग के लक्षण प्रारंभिक अवस्था में पौधे के ऊपरी भाग में दिखाई देते हैं। पौधे की ऊपर की पत्तियां मुरझा जाती हैं, लेकिन एक-दो दिन के भीतर ग्रसित पौधे की पूरी पत्तियां पहले पीली व बाद में भूरी होकर सूख जाती हैं। मिट्टी में पर्याप्त नमी के रहते हुए भी

पौधों का सूखना, उलटा रोग का प्रमुख लक्षण है। रोग ग्रसित पौधों के पूरी तरह सूखने से पहले उखाड़ कर देखने व बाहरी सतह पर किसी प्रकार की सड़न सूखना या ज्यों की रंगहीनता दिखाई नहीं देती है, किन्तु तने के नीचे जड़ की ओर और मध्य से चीरने पर मध्य भाग पर गहरे भूरे या काले रंग की धारियां दिखाई देती है। वास्तव में ये धारियां जोकि आंतरिक भाग के फफूंद के कवक जाल के कारण बनती हैं, जिससे पौधों में पानी व पोषक तत्वों के जड़ से पत्तियों की ओर जाने में बाधा पड़ती है। इस कारण पौधे पीले पड़ते है तथा जैसे ही पूर्ण अवरोध हो जाता है, पौधे सूख कर मर जाते हैं।

रोग प्रबंधन :

* जहां तक सम्भव हो, चना की बुवाई अक्तूबर माह के अन्त में या नवम्बर माह के प्रथम सप्ताह में कर देनी चाहिए। गर्मी के मौसम (मई-जून) में खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए। ऐसा करने से भूमि में उपस्थित कवक के बीजाणु तेज़ धूप के सीधे सम्पर्क में आ जाते हैं और तापमान अधिक होने पर मर जाते हैं।

* बुवाई से पहले खेत तैयार करते समय खेत में 5 टन प्रति हैक्टेयर की दर से गोबर की खाद डाली जाए, तो उखटा रोग में कमी आ जाती है।

* बीजोपचार के लिए टेबुकोनाज़ोल 0.2 ग्राम प्रति 10 किलोग्राम या प्रोक्लोराज 5.8 प्रतिशत + टेबुकोनाज़ोल 1.4 प्रतिशत 1 ग्राम प्रति किलोग्राम या टेबुकोनाज़ोल 15 प्रतिशत + जिनेब 57 प्रतिशत डब्ल्यू.डी.जी. 2 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से प्रयोग करें।

* 7 ग्राम ट्राइकोडर्मा विरिडी प्रति किलोग्राम या स्यूडोमोनास फलोरेसेंस 10 ग्राम प्रति किलोग्राम

शेष पृष्ठ 8 पर

टमाटर की फसल में कीटों और रोगों का समेकित प्रबंधन

एस. एस. सिंह, गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्र, मटेला, अल्मोड़ा (उत्तराखंड)

टमाटर व्यवसायिक दृष्टिकोण से एक महत्वपूर्ण सब्ज़ी फसल है, जिसकी खेती सम्पूर्ण भारत में की जाती है। पिछले दो दशक में टमाटर की फसल में नई प्रजातियों एवं संकर किस्मों के विकास से इसकी खेती में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। भारत में टमाटर की खेती 0.882 मिलियन (8.82 लाख) हैक्टेयर क्षेत्रफल में की जाती है, जिससे कुल 18.735 मिलियन (187.35 लाख) टन उत्पादन प्राप्त होता है। देश में टमाटर की औसत उत्पादकता 21.20 मीट्रिक टन प्रति हैक्टेयर

है। टमाटर के क्षेत्रफल, उत्पादन, उत्पादकता एवं उपलब्धता में सराहनीय वृद्धि हुई है। यही कारण है कि टमाटर की खेती में देश के किसानों का आकर्षण बढ़ा है, क्योंकि टमाटर की खेती से किसानों को अन्य फसलों की तुलना में अधिक आय प्राप्त हो रही है। भारत में टमाटर के अन्तर्गत क्षेत्रफल एवं उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ इस फसल में विभिन्न प्रकार के कीटों एवं रोगों का प्रकोप भी बढ़ा है। परिणामस्वरूप किसानों द्वारा टमाटर की फसल में कीटों एवं रोगों के प्रबंधन हेतु कई प्रकार के नाशीजीव रसायनों (कैमिकल पैस्टीसाइड) का अत्याधिक एवं अविवेकपूर्ण उपयोग किया जा रहा है, जिससे कई प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हुई हैं, जिसमें मानव स्वास्थ्य में कई प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हुई है, जिसमें मानव स्वास्थ्य में कई प्रकार की बीमारियों का संक्रमण, पर्यावरण प्रदूषण, निर्यात में अवरोध, लाभदायक कीटों की संख्या में कमी इत्यादि प्रमुख हैं।

वर्तमान परिवेश में टमाटर की फसल में किसानों को नाशीजीव रसायनों का उपयोग कम करते हुए भी कीटों एवं रोगों का प्रबंधन करना समय की मांग है, जिससे नाशीजीव रसायनों के छिड़काव की संख्या में कमी लाते हुए कीटों एवं रोगों का प्रबंधन किया जा सके। इसके लिए किसानों को अपने टमाटर फसल की नियमित अंतराल पर निगरानी कर आवश्यकता अनुसार कीटों एवं रोगों के प्रकोप से आर्थिक नुकसान होने की आशंका में मान्यता प्राप्त नाशीजीव रसायनों का संस्तुत मात्रा में समय से छिड़काव करना महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त कीटों एवं रोगों के समेकित प्रबंधन हेतु उन्नत शस्य क्रियाओं, जैविक कीटनाशकों, जैविक फफूंदनाशकों, नीम आधारित कीटनाशकों, ऐसी प्रजातियों एवं संकर किस्मों की खेती करना जिसमें कीटों एवं रोगों का प्रकोप अपेक्षाकृत कम होता है, को प्रोत्साहित करना महत्वपूर्ण है। टमाटर की फसल में समेकित नाशीजीव प्रबंधन के प्रोत्साहन हेतु किसानों को जागरूक होना अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि यह देखा गया है कि अधिकांश किसान जागरूकता की कमी के कारण तथा जानकारी के अभाव में टमाटर की फसल में नाशीजीव रसायनों का विवेकपूर्ण तथा आवश्यकता अनुसार उपयोग नहीं करते हैं। परिणाम स्वरूप टमाटर की फसल में किसानों द्वारा नाशीजीव रसायनों का अत्याधिक उपयोग किया जाता है। अतः बदलते परिवेश में टमाटर की फसल में समेकित नाशीजीव प्रबंधन की विभिन्न तकनीकों का उपयोग कर किसान कीटों एवं रोगों के प्रबंधन के साथ-साथ नाशीजीव रसायनों की खपत में कमी करते हुए टमाटर की खेती को और अधिक लाभप्रद एवं टिकाऊ बना सकते हैं।

टमाटर के प्रमुख कीट एवं रोग तथा उनका समेकित प्रबंधन :

फल बेधक/फ्रूट बोरर (हेलिकोवर्पा अर्मीजेरा) : यह टमाटर का प्रमुख कीट है, जिसके प्रकोप से टमाटर के उत्पादन एवं

गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इस कीट के अंडे पीलापन लिए हुए सफेद एवं धारीदार होते है। इसकी पूर्ण विकसित सुंडियां हल्के पीले रंग की होती है, जिनके दोनों किनारों पर गहरी मटमैली धारियां होती है। इस कीट की सुंडियां कच्चे और पके, दोनों प्रकार के फलों में सुराख करके प्रवेश कर जाती है तथा गुदे को खाकर फल को खराब कर देती है। इससे क्षति ग्रसित फल सड़ने लगते है। इसका प्रकोप फल बनने की अवस्था से शुरू होता है।

प्रबंधन : * टमाटर में फूल आने की अवस्था में फेरोमोन ट्रैप का प्रयोग करें। यदि सभी किसान मिल कर इसका उपयोग करें, तो अधिक प्रभावी होगा। फल बेधक कीट के प्रकोप/आगमन की जानकारी के लिए दो-तीन फांस (ट्रैप) प्रति हैक्टेयर तथा बड़े पैमाने पर फल बेधक के नर कीटों को एकत्र करने के लिए सात-आठ फांस (ट्रैप) प्रति हैक्टेयर में उपयोग किया जाता है।

* फूल आने की अवस्था में यदि फल बेधक कीट का प्रकोप दिखाई दे, तो ट्राइकोग्रामा चिलोनिस (अंड परजीवी) का उपयोग करें। 5-6 ट्राइकोग्रामा कार्ड प्रति हैक्टेयर, टमाटर की फसल में 7-10 दिनों के अंतराल पर तीन-चार बार उपयोग करना चाहिए। ट्राइकोग्रामा चिलोनिस फल बेधक कीट के अंडों को नष्ट कर देते है।

* एन.पी.वी. (न्यूक्लियर पॉलिहाइड्रोसिस वायरस) 250 एल. ई. (250 सुंडी के बराबर वायरस तत्व) के घोल को प्रति हैक्टेयर में उपयोग करें। छिड़काव प्रकोप का स्तर देख कर आवश्यकता अनुसार ही करें।

* यदि ट्राइकोग्रामा कार्ड एवं एन.पी.वी. उपलब्ध ना हो तो ऐसी स्थिति में इंडोक्साकार्ब 0.5 मिलीलीटर अथवा क्लोरएन्ट्रानिलीप्रोली 0.3 मिलीलीटर अथवा लैम्बडा-साइलोथ्रिन 0.5 मिलीलीटर अथवा फ्लूबेन्डियामाइड 0.3 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें। फूल खिलने के बाद (जब फल मटर के दाने के बराबर हो) फल बेधक कीट का प्रकोप प्रतीत हो तो पहला छिड़काव इंडोक्साकार्ब और यदि आवश्यक हो तो दूसरा छिड़काव 10-12 दिनों बाद बेसिलस थूरिनजेन्सिस पर आधारित कीटनाशक का करें। दो छिड़काव के बाद भी प्रकोप दिखाई दे, तो तीसरा छिड़काव नीम आधारित कीटनाशक का करना चाहिए।

सफेद भृंग/व्हाइट ग्रब (होलोट्राइकिया कन्सेनगुनिया) : इसकी सफेद रंग की सुंडियां पौधों की कोमल जड़ों को जो जल तथा पोषक तत्वों को लेने में अधिक सक्रिय होती है, खा जाती है। परिणामस्वरूप पौधे की वृद्धि रुक जाती है तथा पौधे सूखने लगते है। इस कीट का प्रकोप हल्की भूमि में अधिक होता है। इसके वयस्क मई-जून में ज़मीन से बाहर निकल कर अंडा देना प्रारम्भ करते हैं। इससे सुंडियां निकलती हैं और ये सुंडियां पौधों की कोमल जड़ों को क्षति ग्रसित करती हैं। इस कीट का प्रकोप बरसात एवं जाड़े वाली फसल में अधिक होता है, जबकि गर्मी वाली फसल में प्रकोप कम होता है।

प्रबंधन :

* रोपाई से पूर्व खेत की अच्छी प्रकार से तैयारी कर लें। खेत की तैयारी के समय मिलने वाली व्हाइट ग्रब की सुंडियों को एकत्र कर नष्ट कर दें।

* खेत की तैयारी के समय तथा रोपाई से पहले इमिडाक्लोरोपिड ग्रेन्यूल की 20-25 किलोग्राम मात्रा प्रति हैक्टेयर क्षेत्रफल की मिट्टी में मिला दें। ऐसा करने से रोपाई के बाद पौधों को व्हाइट ग्रब से नुकसान नहीं होता है।

* रोपाई के बाद तीन-चार दिनों के अंतराल पर फसल की निरंतर निगरानी करते रहें। प्रकोप होने की अवस्था में ही रसायनों का उपयोग करना चाहिए। रोपाई के 15-20 दिनों के अंदर निगरानी के समय व्हाइट ग्रब से ग्रसित पौधों को निष्कासित कर दें तथा उनके स्थान पर नये पौधों की रोपाई करें। यदि ग्रसित पौधों के आस-पास व्हाइट ग्रब की सुंडियां दिखाई दें, तो नष्ट कर दें। यदि इन उपायों को अपनाने के बाद भी व्हाइट ग्रब कीट का प्रकोप हो तो क्लोरोपायरीफॉस 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में मिला कर पौधों की जड़ों को सींच दें।

कटुआ कीट/कट वर्म (एग्रोटिस इप्सीलॉन) : इस कीट की भूरे रंग की सुंडियां पौधों को ज़मीन की सतह से काट कर नुकसान पहुंचाती है। यह कीट रात्रि के

समय क्षति पहुंचाते है। दिन में मिट्टी में छिपे रहते है। इस कीट से सबसे अधिक नुकसान पौध रोपाई के 20-25 दिनों के अंदर होता है। इसका अधिक प्रकोप होने पर कभी-कभी रोपित खेत में पौधों की संख्या बहुत कम हो जाती है। इसका प्रकोप हल्की भूमि में अधिक होता है। इस कीट का प्रकोप उन क्षेत्रों में अधिक होता है, जहां टमाटर की खेती आलू के बाद की जाती है। इसका प्रौढ़ गहरे भूरे रंग का तथा लगभग 2-4 सैंटीमीटर लम्बा होता है।

प्रबंधन : * रोपाई से पूर्व खेत की अच्छी प्रकार से तैयारी कर लें। खेत की तैयारी के समय मिलने वाली कट वर्म की सुंडियों को एकत्र कर नष्ट कर दें।

* खेत की तैयारी के समय तथा रोपाई से पहले इमिडाक्लोप्रिड ग्रेन्यूल की 20-25 किलोग्राम मात्रा प्रति हैक्टेयर क्षेत्रफल की मिट्टी में मिला दें। ऐसा करने से रोपाई के बाद पौधों को कट वर्म से नुकसान नहीं होता है।

* रोपाई के बाद तीन-चार दिनों के अंतराल पर फसल की निरंतर निगरानी करते रहें। प्रकोप होने की अवस्था में ही रसायनों का उपयोग करें। रोपाई के 15-20 दिनों के अंदर निगरानी के समय कटवर्म से ग्रसित पौधों को निष्कासित कर दें तथा उनके स्थान पर नये पौधों की रोपाई करें। यदि ग्रसित पौधों के आस-पास कटवर्म की सुंडियां दिखाई दें, तो नष्ट कर दें। यदि इन उपायों को अपनाने के बाद भी कटवर्म कीट का प्रकोप हो तो क्लोरोपायरीफॉस 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में मिला कर पौधों की जड़ों को सींच दें।

पर्णसुरंगक कीट/लीफ माइनर (लीरियोमाइजा ट्राइफोली) : इस कीट की सुंडियां पौधों को

नुकसान पहुंचाती है, जिसके प्रकोप से पत्तियों की ऊपरी और निचली सतह पर टेढ़ी-मेढ़ी सुरंगें बनती है। यह हरे पदार्थ को खाते हुए आगे बढ़ती है। पत्तियों के ग्रसित भाग का क्लोरोफिल समाप्त हो जाता है। इससे क्षति ग्रसित पत्तियां मुरझा कर सूख जाती हैं। पौधों में फूल एवं फल कम बनते हैं। इसके प्रकोप से पौधों में भोजन बनाने की क्षमता कम हो जाती है। इस कीट के वयस्क का शरीर काले रंग का होता है तथा सिर पीला और आंखें भूरी होती हैं। शरीर पर काली या पीली पट्टी होती है।

प्रबंधन : * प्रकोप की प्रारम्भिक अवस्था में नीम ऑयल आधारित कीटनाशक की 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करें।

* बेसिलस थूरिनजिएन्सिस (बी.टी.) आधारित कीटनाशक की 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बना कर भी छिड़काव किया जा सकता है।

* लीफ माइनर का प्रकोप

होने पर क्विनलफॉस 2 मिलीलीटर अथवा एसिटामिप्रिड 0.3 मिलीलीटर अथवा कार्बोसल्फॉन 1 मिलीलीटर का छिड़काव प्रति लीटर पानी में मिला कर आवश्यकता अनुसार करें।

रसाद कीट / थ्रिप्स (फ्रैन्कलिनिला स्कूल्ट्जी) : इस कीट के प्रकोप से पत्तियों पर छोटे-छोटे सफेद या भूरे रंग के चकत्ते पड़ जाते हैं। इस कीट के शिशु (निम्फ) एवं वयस्क (एडल्ट) दोनों ही पत्तियों को खुरच कर

शेष पृष्ठ 10 पर

सरसों की अच्छी पैदावार के लिए कीट पीड़कों का प्रबंधन अति आवश्यक है और इसके लिए हमें जैविक साधनों के साथ-साथ रासायनिक कीटनाशियों का उपयोग भी करना पड़ता है। अत: फसल को नुकसान से बचने के लिए रासायनिक उपचार भी करना पड़ता है।

सरसों की फसल के मुख्य कीट एवं प्रबंधन

सरसों के उत्पादन में राजस्थान का नाम देश में अग्रणी है। देश के कुल उत्पादन का लगभग 40 से 45 प्रतिशत सरसों राजस्थान में होता है। राज्य में इस फसल का कुल क्षेत्र 36.6 लाख हैक्टेयर है तथा उत्पादन 44.1 लाख टन हैं। सरसों की प्रति हैक्टेयर उत्पादकता 1205 किलो/हैक्टेयर है।

सरसों की अच्छी पैदावार के लिए कीट पीड़कों का प्रबंधन अति आवश्यक है और इसके लिए हमें जैविक साधनों के साथ-साथ रासायनिक कीटनाशियों का उपयोग भी करना पड़ता है। अत: फसल को नुकसान से बचने के लिए रासायनिक उपचार भी करना पड़ता है।

रासायनिक कीटनाशियों का अत्यधिक उपयोग करने से इनके नुकसानदायक अवशेष उत्पादित बीजों में रह जाते हैं तथा वे तेल के साथ हमारे शरीर में पहुंच जाते हैं, जिसका स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। इतना ही नहीं बल्कि इनके लगातार एवं अंधाधुंध इस्तेमाल से प्रकृति एवं फसल पर मित्र कीटों का संतुलन भी बिगड़ जाता है। अत: यह अति आवश्यक है कि सरसों एवं राई के प्रमुख कीटों की रोकथाम एवं नियंत्रण के लिए ऐसा प्रबंधन किया जाए, जिससे कीटों का प्रकोप भी कम हो और कीट आर्थिक क्षति स्तर से नीचे रहे। जब अति आवश्यक हो, तभी रासायनिक कीटनाशियों का उपयोग करें और उन्हीं कीटनाशियों का उपयोग किया जाए, जो मित्र कीटों के लिए सुरक्षित हो तथा उत्पादित दानों में हानिकारक अवशेष नहीं छोड़ें साथ ही पर्यावरण को भी किसी प्रकार का नुकसान नहीं पहुंचाए।

सरसों की फसल पर पौधों की अवस्था के अनुसान क्रमश: लगने वाले प्रमुख कीट एवं उनके जीवनचक्र की विवरण इस प्रकार है :

मोयला या चेपा (लाईपेफिस ईरिजिमी, एफिम, गोस्सपी एवं माइजस परसिकार्ड): यह कीट सरसों का प्रमुख एवं सबसे हानिकारक कीट है। इसके प्रकोप से फसल का उत्पादन सबसे ज्यादा प्रभावित होता है। यह कीट अंडाकार नर्म मुलायम शरीर वाला हरे भूरे रंग का होता है, जो 2 से 2.5 मिलीलीटर बड़ा होता है। पौधों पर इस कीट के झुंड प्राय: पत्तियों, फूलों, फलियों एवं तनों पर चिपके हुए पाए जाते हैं। यह कीट पौधों का रस चूसकर उसे कमजोर कर देते हैं। कीट से प्रभावित पत्तियां जगह-जगह मुड़ी हुई दिखाई देती है तथा फलियों के अंदर दाने कमजोर पड़कर सिकुड़ जाते हैं। प्रकोप अत्यधिक होने पर या तीव्र अवस्था में होने पर पौधों की बढ़वार मारी जाती है। फूल नहीं बन पाते और यदि बन भी जायें, तो फलियां नहीं बनती या अविकसित बनती हैं।

इस कीट के दो रूप होते है- एक बिना पंख का तथा दूसरा पंख वाला। बिना पंख वाले झुंड में पत्तियों, फूलों, फलियों एवं तनों पर चिपके रहते है तथा पंख वाले उड़कर कीटों का प्रसार करते है। इस कीट का फसलों पर प्रकोप पंखदार कीट से ही होता है और शीघ्र ही उनकी संख्या में वृद्धि हो जाती है। मार्च-अप्रैल में तापमान बढ़ने पर पंखदार कीट ठंडे स्थानों पर छुप जाते हैं। 2 से 3 दिन का जाड़े का बादलों वाला मौसम इस कीट के प्रसार के लिए बहुत उपयुक्त होता है और देखते ही देखते यह कीट महामारी का रूप धारण कर लेते हैं। मादा कीट सीधे ही बच्चों (निम्फ) को जन्म देते है।, जो एक सप्ताह में वयस्क मादाओं में बदलकर अलेंगिक प्रजनन द्वारा दूसरे निम्फ पैदा करते हैं, जो क्रम से पुन: शीघ्रता से अन्य पीढ़ियां पैदा करके इसकी पर्याप्त संख्या बढ़ा देते हैं।

आर्थिक क्षति स्तर: 30 प्रतिशत प्रभावित पौधे या 50 से 60 चेपा प्रति सैंटीमीटर तने की लंबाई के प्रकोप को आर्थिक क्षति स्तर माना गया है।

प्रबंधन:

● हर 7 से 8 दिन में सरसों उत्पाद क्षेत्रों का सर्वेक्षण कर क्षति-स्तर का आंकलन करते रहना चाहिए।

● मोयला प्रतिरोधी प्रजाति की बुवाई करें।

● फसल की अगेती बुवाई करने से मोयला कीट का प्रभाव कम होता है।

● अधिक प्रकोप वाले क्षेत्र में तोरिया-सरसों बोनी चाहिए, क्योंकि इस पर मोयला का असर कम होता है।

● मोयला के प्रारंभिक परभक्षी कीट क्राईसोपा, सिरफिड मक्खी आदि को संरक्षण प्रदान करना चाहिए और यदि आवश्यक हो, तो इसके अंडों को या कीटों को बाहर से लाकर फसल पर छोड़ना चाहिए।

● नाशीजीव व उनके प्राकृतिक शत्रुओं (परभक्षी) की संख्या का अनुपात 2:1 होने पर कीटनाशी रसायनों का छिड़काव व करें। छिड़काव से पूर्व परभक्षियों का आंकलन अवश्य करें।

नियंत्रण हेतु रासायनिक उपचार: फसल में रासायनिक उपचार को अंतिम उपचार के रूप में तभी अपनाना चाहिए, जब

उपरोक्त कीड़ों के लिए प्रबंधन के अंतर्गत बताए गए तरीके कारगर न हो और आर्थिक क्षति स्तर की सीमा पार कर गए हों तथा नाशीजीव एवं प्राकृतिक शत्रुओं का संतुलन 2:1 के अनुपात से कम हों। रासायनिक उपचार के अंतर्गत फसल पर उन्हीं रासायनों का उपयोग करना चाहिए, जिनकी सिफारिश एवं मात्रा प्रति हैक्टेयर दी गई हो तथा वातावरण को तुलनात्मक दृष्टि से कम दूषित करें।

कुछ प्रमुख रासायनों के नाम निम्न हैं:

● डाइमिथोएट 30 ई.सी.

● मिथाइल डेमोटोन 25 ई.सी.

● क्लोरोपाइरीफॉस 25 ई.सी.

● फेंत्रो 50 ई.सी.

आरा मक्खी (अथैलिया प्रोक्जिया): यह कीट सरसों की फसल का महत्वपूर्ण हानिकारक कीट है। इस कीट का वयस्क आकार में बड़ी नीली मक्खी के बराबर होता है। यह सबसे पहले मध्य जुलाई में मूली के पौधों पर प्रकट होता है। मादा कीट पत्तियों के किनारे की तरफ कोशिकाओं के अंदर एक-एक करके अंडे देती है। अंडों में से 5 से 7 दिन में लटें निकलती हैं। सवजानित लटें प्रारंभ में मटमैले रंग की होती है। वृद्धि के साथ काले रंग में परिवर्तित हो जाती है। ये लटें पत्ती को बड़ी तेजी से खाती है, जिससे पत्ती में अनियमित छेद हो जाते है। तीव्र प्रकोप की स्थिति में पत्तियों के स्थान पर सिर्फ शिराओं का जाल ही बचता है। इस कीट का मूली के बाद शलगम और फिर फूलगोभी और बाद में तोरिया, राई और सरसों की फसल पर आक्रमण होता है।

पूर्ण विकसित लटें 2 से 2.5 सैंटीमीटर लंबी एवं गहरे भूरे रंग की होती हैं। इनके शरीर पर झुर्रियां पाई जाती हैं। ये जमीन के अंदर क्रमिकोश से वयस्क मक्खियां 1 से 3 दिन में बाहर आ जाती है और 4 से 5 दिन में वापिस अंडा देना शुरू कर देती हैं। यह कीट मार्च तक सक्रिय रहते हैं। मार्च-अप्रैल में लटें भूमि के अंदर घुसकर कोकून बना कर आराम की अवस्था में जीवन यायन व्यतीत करती हैं, जो पुन: जुलाई के मध्य प्रकट होकर सक्रिय हो जाती है। सरसों की फसल पर पौधों के उगते ही प्रकोप शुरू हो जाता है और छोटी अवस्था में इस कीट से फसल को भारी क्षति पहुंचती है। विशेषकर फसल में अंकुरण के 7 से 10 दिन में ये कीट अधिक हानि पहुंचाते हैं।

प्रबंधन :

● कीट के जीवन की सबसे कमजोर कड़ी क्रमिकोश है। इसे नष्ट करने के लिए मार्च-अप्रैल में ही फसल की कटाई के बाद गहरी जुताई करनी चाहिए। इससे कीट नष्ट होने के साथ-साथ जमीन की सतह पर भी आ जाते है, जो धूप व चिड़ियों की मदद से नष्ट कर दिए जाते हैं।

● मूली, शलगम, तोरिया की अगेती फसलों पर कीट की रोकथाम कर सरसों की फसल पर इसके प्रकोप की संभावना को काफी हद तक कम किया जा सकता है। इन फसलों पर लटों को सुबह शाम के समय हाथ से एकत्र करके व मिट्टी के तेल के पात्र में डालकर नष्ट कर देना चाहिए।

● सरसों की खेती के क्षेत्र में मूली, शलगम व फूलगोभी आदि की खेती न की जाए।

● नीम की पत्ती या निम्बोली के 5 प्रतिशत घोल का छिड़काव करने से लाभदायक परिणाम प्राप्त होते हैं।

नियंत्रण हेतु रासायनिक उपचार: फसल में रासायनिक उपचार को अंतिम उपचार के रूप में तभी अपनाना चाहिए, जब उपरोक्त कीड़ों के प्रबंधन के अंतर्गत बताए गए तरीके कारगर न हो और आर्थिक क्षति स्तर की सीमा पार कर गए हों तथा नाशीजीव एवं प्राकृतिक शत्रुओं का संतुलन 2:1 के अनुपात से कम हो। रासायनिक उपचार के अंतर्गत फसल पर उन्हीं रासायनों का उपयोग करना चाहिए, जिनकी सिफारिश हो एवं मात्रा प्रति हैक्टेयर दी गई हो तथा वातारण को तुलनात्मक दृष्टि से कम दूषित करें।

कुछ प्रमुख रासायनों के नाम निम्न हैं:

● क्यूनोलफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण

● क्यूनोलफॉस 25 ई.सी.

● मैलाथियान 5 प्रतिशत चूर्ण

● फार्मोथिआन 25 ई.सी.

● क्लोरोपाईरिफॉस 20 ई.सी.

● एसिफेट 75 एस.पी.

● मोनोक्रोटोफॉस 40 ई.सी.

नोट: रासायनों का प्रयोग फसल में तभी करना चाहिए, जब उपयोग अत्यंत आवश्यक हो तथा कीटों की संख्या आर्थिक क्षति स्तर से ऊपर पहुंच गई हो, रासायनों का उपयोग सीमा से ज्यादा बिल्कुल नहीं करना चाहिए।

आवश्यकता पड़ने पर मोयला के प्रबंधन के लिए फसल बुआई के 25 दिनों के बाद डाइमिथोएट 30 ई.सी.अथवा मिथाइल डेमोटोन 25 ई.सी. का छिड़काव 20-25 दिन के अंतराल में दी गई संतुलित मात्रा में 3 बार करने से शत-प्रतिशत लाभ की उम्मीद रहती है।

आंवले की मुख्य बीमारियां एवं नियंत्रण

1. रतवा : इस रोग में पौधों की पत्ती और फलों पर भूरे-भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं और इस रोग से प्रभावित फल ज़मीन पर गिर जाते हैं। पौधों में यह रोग रेवेनेलिया इम्बिलका नामक कवक से होता है। यदि इन्हें ना रोका गया, तो ये कवक पौधों को बहुत ज्यादा हानि पहुंचा देते हैं। इनकी रोकथाम के लिए नीम की पत्तियों को पानी में उबाल कर किसी पम्प के द्वारा छिड़काव करें, जिससे ये रोग ठीक हो सके।

2. फलों में सड़न : फलों में यह रोग ज्यादातर बाज़ार भेजते समय या भंडार ग्रह में लगता है। इस रोग में फूलों पर भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं, जोकि धीरे-धीरे पूरे फूल पर हो जाते हैं। जब ये निशान पुराने हो जाते हैं, तो इसका रंग नीला हो जाता है। इस रोग को फैलाने वाले कवक के नाम हैं : पेनिसिलियम आक्जेलिक्म और एस्प्रिजलास नाइजर। इस कवक के कुप्रभाव से फलों को बचाने के लिए बोरेक्स की 4 प्रतिशत मात्रा को नमक या सुहागा के साथ मिलाकर उपचारित करते हैं। इसे नियंत्रण करने के लिए जिस फल पर खरोंच लग जाए, तो उन्हे बाज़ार में या भंडार गृह में ना रखें।

3. कुंगी : इस रोग में पत्तों और फलों पर गोल आकार के लाल रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए इंडोफिल एम-45 0.3 प्रतिशत को दो बार डालें। पहली सितम्बर के शुरू में और दूसरी बार फिर 15 दिनों के बाद डालें।

4. अंदरूनी गलन : यह बीमारी मुख्य तौर पर बोरोन की कमी से होती है। इस बिमारी के कारण टिशु भूरे रंग के और बाद में काले रंग के हो जाते हैं। इस बीमारी के बचाव के लिए बोरोन 0.6 प्रतिशत सितम्बर से अक्तूबर के महीने में डालें।

5. फल का गलना : इस बीमारी के कारण फलों पर सोजिश पड़ जाती है और रंग बदल जाता है, इसकी रोकथाम के लिए बोरेक्स और क्लोराइड 0.1 प्रतिशत-0. 5 प्रतिशत डालें।

नीम का पानी बनाने का तरीका : नीम के पेड़ की 25 से 30 पत्तियों को तोड़ कर लगभग 50 लीटर पानी में उबाल लें। पकाते हुए जब पानी की मात्रा 25 लीटर रह जाए, तो इसे ठण्डा करके किसी स्थान पर सुरक्षित रख लें। नीम के इस तैयार पानी के छिड़काव से किसी भी प्रकार का रोग ठीक हो जाता है। नीम की पत्तियों का एक लीटर पानी बनाकर इसमें 15 लीटर सादा पानी मिला कर रोग से प्रभावित पौधों पर छिड़काव करें। इसमें सभी रोग ठीक हो जाते हैं।

शेष पृष्ठ 5 की

चने के प्रमुख रोग व कीट एवं उनका प्रबंधन

बीज की दर से बीजोपचार करें। ट्राइकोडर्मा फफूंदी उखटा रोग उत्पन्न करने वाली फफूंद को कम करके अन्तत: मार देती है।

* चना की उखटा रोगरोधी प्रजातियों जैसे एच.सी.-1, एच. सी.-3, एच.सी.-5, एच.के.-1,

एच.के.-2, सी-214, उदय, अवरोधी, बी.जी.-244, पूसा-362, जे.जी.-315, फूले जी-5, डब्ल्यू. आर.-315 आदि उगाना चाहिए।

* यदि समय हो तो उन खेतों में जहां मिश्रित खेती करने से भी उखटा रोग के प्रकोप में कमी आ जाती है।

* चने की गहरी बुवाई (8 से 10 सैंटीमीटर गहरी) खेत में उखेड़ा की समस्या को कम कर देती है।

एस्कोकाइटा अंगमारी रोग : यह रोग *एस्कोकाइटा रैबेआई* नामक फफूंद से उत्पन्न होता है। यह रोग बीज जनित व मृदा जनित है। अधिकांशत: यह रोग चने में फल तथा दाना भरने की अवस्था में प्रकोप करता है, जिससे 50 प्रतिशत तक क्षति हो जाती है।

लक्षण : रोग के आरम्भ में सर्वप्रथम पत्तियों पर हल्के पीले से गोल धब्बे बनते हैं। शीघ्र की शाखाओं व फलियों पर भी अनेक धब्बे बन जाते हैं। इस रोग के विशिष्ट लक्षण गोलाकार व लम्बे धब्बों के रूप में देखे जा सकते हैं। अनुकूल वातावरण मिलने पर ये धब्बे आकार व संख्या में बढ़ कर आपस में मिल जाते है व पत्तियों और पौधे झुलसे हुए दिखाई देने लगते है। पौधे रोग से संक्रमित होने के पश्चात् सूखने लगते हैं। यह रोग बीज द्वारा मृदा में खेत में उपस्थित फसल अवशेषों में आगामी फसल तक सुरक्षित रहता है।

रोग प्रबंधन :

* एक ही खेत में लगातार कई वर्षों तक चना की फसल नहीं बोनी चाहिए।

* गर्मी में खेत की मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई कर देनी चाहिए, जिससे मृदा जनित प्राथमिक संक्रमण का स्त्रोत नष्ट हो जाए।

* रोग प्रतिरोधक किस्में जैसे कि सी-235, एच.सी.-3 या हिमाचल चना-1 उगाएं।

* बीजों को बोने से पूर्व फफूंदनाशी दवा से टेबुकोनाज़ोल 15 प्रतिशत + ज़िनेब 57 प्रतिशत डब्ल्यू.डी.जी. 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए ताकि बीज जनित प्राथमिक संक्रमण का स्त्रोत नष्ट हो जाए।

* क्लोरोथेलोनिल 1.0 ग्राम दवा प्रति लीटर की दर से अथवा मैकोज़ेब की 2 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी को घोल बना कर 12-15 दिन के अन्तर पर आवश्यकता अनुसार 2-3 छिड़काव करना चाहिए।

शुष्क-मूल विगलन (ड्राई रूट रॉट) : यह एक मृदा जनित रोग है। इस रोग को उत्पन्न करने वाली कवक राइजोक्टोनिया बटाटीकोला के पौधों में संक्रमण से यह रोग उत्पन्न होता है। बहुधा यह रोग पौधों में फूल आने और फलियां बनते समय लगता है।

लक्षण : रोगी पौधों की पत्तियां तथा तने, सूखे हुए भूसे के रंग के हो जाते हैं। जड़ें अविकसित तथा काली होकर सड़ने लगती है। रोग ग्रसित पौधों की जड़ें सूख कर आसानी से टूट जाती हैं और केवल कुछ ही आंशिक जड़ें रह जाती है या जड़ें पूर्ण रूप से समाप्त हो जाती हैं। जड़ों के दिखाई देने वाले भाग और तनों के आन्तरिक भाग पर छोटे काले रंग के कवक के स्कलेरोशिया नामक बीजाणु देखे जा सकते है। वातावरण का तापमान जब 30 डिग्री सैंटीग्रेड के आस-पास हो और मृदा में नमी की मात्रा कम हो, तब यह रोग अधिक फैलता है।

रोग प्रबंधन :

* फसल को शुष्क एवं गर्मी के वातावरण से बचाने के लिए बुवाई समय पर करनी चाहिए।

* मई-जून में खेत को गहरा जोत कर छोड़ देने से कवक के बीजाणु कम होते है।

* रोग प्रतिरोधक किस्में जैसे कि सी.एस.जे.-515, एच.सी.-3, एच.सी.-5, एच.के.-1 या एच. के.-2 उगाएं।

* बीजों को टेबुकोनाज़ोल + ज़िनेब 57 प्रतिशत डब्ल्यू.डी. जी. 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से या 1 ग्राम वीटावैक्स कवकनाशी और 4 ग्राम ट्राइकोडरमा प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए।

बोट्रायटिस ग्रे मोल्ड : यह *बोट्रायटिस सिनेरिया* नामक कवक द्वारा फैलता है। हमारी उत्तरी-पश्चिमी भारत की मुख्य बीमारी है।

लक्षण : पत्तियां पीली पड़ कर झड़ जाती है। नमी लिए हुए धब्बे तथा मुख्य कलिकाओं का सदन एवं भूरे रंग की कवक लग जाना, इस रोग के मुख्य लक्षण हैं। इस बीमारी से पुष्प गिर जाते हैं और फलियां भी कम बनती है। जलायुक्त और अनियमित भूरे व सफेद धब्बे फलियों व संक्रमित बीजों पर देखे जा सकते है। अंतत: उपज पर प्रभाव पड़ता है।

रोग प्रबंधन :

* फसल में पौधों के बीच व्यापक दूरी अपनाएं।

* अलसी के साथ अंतर फसल लेनी चाहिए।

* फसल की अत्याधिक वनस्पतिक वृद्धि न होने दें।

* खेत में अत्याधिक पानी न दें।

* बीजोपचार के लिए टेबुकोनाज़ोल 15 प्रतिशत + ज़िनेब 57 प्रतिशत डब्ल्यू.डी.जी. 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से प्रयोग करें।

* फसल में कार्बेन्डाज़िम 1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें व आवश्यकता हो तो 15 दिन के अंतराल पर फिर से दोहरायें।

प्रमुख कीट एवं प्रबंधन :

फली छेदक : इस कीट की लटें हरे रंग की सवा इंच लम्बी होती है, जो बाद में गहरे भूरे रंग की हो जाती है। ये आरम्भ में चने की पत्तियों को खाती है। फली लगने पर उनमें छेद करके अन्दर का दाना खाकर खोखला कर देती है।

प्रबंधन : * लट प्रबंधन के लिए फूल आने से पहले तथा फली लगने के बाद फेनवेलरेट 0.4 प्रतिशत डी.पी., क्विनलफॉस 1.5 प्रतिशत डी.पी. का 20-25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर भुरकाव करें। जब फसल पर 90 प्रतिशत फूल आ जाएं, तो आवश्यकता अनुसार एक भुरकाव और करें।

* पानी की सुविधा वाले स्थानों में फूल आने के समय इमामेक्टिन बेंजोएट 5 प्रतिशत एस.जी. या लैम्बडासाइहेलोथ्रिन 5 प्रतिशत ई.सी. या फ्लुबेंडियामाइड 8.33 प्रतिशत डेल्टामेथ्रिन 5.56 प्रतिशत या नोवालुरॉन 5.25 प्रतिशत इंडोक्साकार्ब 4.50 प्रतिशत या क्विनलफॉस 25 ई.सी. एक लीटर या प्रोफेनोफॉस 50 ई.सी. 1.5 लीटर प्रति हैक्टेयर पानी में मिलाकर छिड़काव करें अथवा एन. पी.वी. 250 एल.ई. 125 मिलीलीटर को 500 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें। आवश्यकता अनुसार दूसरा छिड़काव 10 दिन बाद करें अथवा बेसिलस थूरीनजिएन्सिस (बी. टी.) 750 मिलीलीटर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें एवं आवश्यकता हो तो दूसरा छिड़काव 5 दिन बाद करें अथवा फूल आने से पहले फली लगने के बाद शाम समय लट प्रबंधन हेतु दो छिड़काव निंबोली पाऊडर के जलीय अर्क 5 प्रतिशत या नीम की पत्ती के जलीय 10 प्रतिशत का छिड़काव करें। दूसरा छिड़काव प्रथम छिड़काव के सात दिन बाद करें।

कटवर्म, दीमक एवं वायर वर्म : ये तीनों प्रकार के कीट फसल की आरम्भिक अवस्था से हानि पहुंचाते है। इनके प्रबंधन हेतु भूमि उपचार करना आवश्यक है। कटवर्म की लटें गहरे भूरे रंग की एक से डेढ़ इंच लम्बी तथा एक-चौथाई से एक-तिहाई मोटी होती है, जो ढीलों के नीचे छुपी रहती है और रात के समय बाहर निकल कर पौधे को भूमि की सतह के पास से काट देती है। छूने पर ये लटें गोल घुण्डी बन कर पड़ जाती है।

प्रबंधन :

* इनकी प्रबंधन हेतु क्विनलफॉस 5 प्रतिशत चूर्ण 25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से अंतिम जुताई के पूर्व भुरक कर मिट्टी में मिलाएं।

* भूमि उपचार न हो पाए तो फसल पर फटका प्रभाव दिखाई देते ही उपरोक्त चूर्ण का भुरकाव फसल पर कीट प्रकोप से बचा जा सकता है।

* दीमक के प्रबंधन हेतु 100 किलोग्राम बीज में 800 मिलीलीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. मिला कर बीज को उपचारित

करें।

* खड़ी फसल में दीमक लगने पर 4 लीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. प्रति हैक्टेयर की दर से सिंचाई के समय दें।

कृषि क्षेत्र में भारत की कामयाबी का नया मुकाम : साल 2025 का सफर

साल 2014 में प्रधानमंत्री मोदी के सत्ता संभालने के एक दशक बाद, भारत का कृषि क्षेत्र साल 2025 तक पूरी तरह से बदल चुका है। अभी कम उत्पादकता, कीमतों में अनिश्चितता और आयात पर निर्भरता से ग्रस्त व्यवस्था, अब रिकॉर्ड उत्पादन, किसानों की सुनिश्चित आय, वैज्ञानिक नवाचार और दीर्घकालिक आत्मनिर्भरता से भरपूर है, जिसके पीछे 11 वर्षों के सुधारों का एक सुसंगत और भविष्य के लिए तैयार कृषि ढांचे में एकीकरण है।

बिखराव से केंद्रित दृष्टिकोण की ओर : 2025 में शुरू की गई प्रधानमंत्री धन-धान्य कृषि योजना (पी.एम.डी.डी.के.वाई.) ने लक्षित और नतीजों पर फोकस करने वाले कृषि सुधार की दिशा में एक अहम कदम उठाया। केन्द्रीय बजट 2025-26 में घोषित और जुलाई में केन्द्रीय मंत्रिमंडल द्वारा अनुमोदित यह योजना, 100 कम प्रदर्शन वाले जिलों पर केन्द्रित है और इसका मकसद 1.7 करोड़ किसानों को लाभ पहुंचाना है। इसके लिए प्रति वर्ष 24,000 करोड़ रुपए का बजट आबंटित किया गया है, ताकि कम उत्पादकता, जल संकट और ऋण की कमी जैसी मुश्किलों का समाधान किया जा सके।

दलहन : आत्मनिर्भरता की ओर एक रणनीतिक सफलता : वर्ष 2025 में, भारत ने आयात पर निर्भरता कम करने के लिए 11,440 करोड़ रुपए के परिव्यय के साथ दलहन में आत्मनिर्भरता मिशन की शुरूआत की। इस मिशन का लक्ष्य 2030-31 तक 350 लाख टन दलहन उत्पादन और 310 लाख हैक्टेयर में दलहन की खेती करना है। पहली बार, तुअर, उड़द और मसुर उगाने वाले किसानों को बड़े पैमाने पर गुणवत्तापूर्ण बीज वितरण के साथ 4 वर्षों के लिए 100 प्रतिशत न्यूनतम समर्थन मूल्य

(एम.एस.पी.) खरीद का आश्वासन दिया गया है। करीब 2 करोड़ किसानों को लाभ पहुंचाने वाला यह मिशन, मूल्य श्रृंखलाओं को मज़बूत करता है, आय को स्थिर करता है और पोषण सुरक्षा को बढ़ावा देता है।

कपास मिशन : केन्द्रीय बजट 2025-26 में घोषित 5 वर्षीय कपास मिशन का मकसद किसानों को विज्ञान और प्रौद्योगिकी संबंधी मदद देकर उत्पादकता बढ़ाना है, खासकर अतिरिक्त लंबे रेशे वाली कपास की गुणवत्तापूर्ण कपास की लगातार आपूर्ति करके, यह मिशन भारत के वस्त्र क्षेत्र को मज़बूत करता है, जहां 80 प्रतिशत क्षमता लघु एवं मध्यम उद्यमों (एम.एस.एम.ई.) द्वारा संचालित है।

रिकॉर्ड उत्पादन-एक दशक के सुधारों का परिणाम : इन नीतिगत फैसलों का असर साल 2025 में साफ तौर पर दिखाई दिया। कृषि मंत्रालय द्वारा नवम्बर 2025 में जारी आंकड़ों के मुताबिक, भारत ने 2024-2025 में 357.73 मिलियन टन खाद्यान्न उत्पादन के साथ अब तक का सबसे उच्च स्तर हासिल किया। यह 2015-16 की तुलना में 106 मिलियन टन से अधिक की वृद्धि दर्शाता है।

2025 में घोषित प्रमुख उपलब्धियां : चावल का उत्पादन रिकॉर्ड 1,501.84 लाख टन, गेहूं का उत्पादन 1,179.45 लाख टन रहा, जो हाल के इतिहास में सबसे अधिक वार्षिक वृद्धि है, दालों का उत्पादन 256.83 लाख टन तक पहुंचा, तिलहन का उत्पादन रिकॉर्ड 429.89 लाख टन तक पहुंची, 2025 की पहली तिमाही में, भारत के कृषि क्षेत्र ने 3.7 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की, जिससे वह दुनिया की सबसे तेज़ी से बढ़ती कृषि अर्थव्यवस्थाओं में शामिल हो गया।

एम.एस.पी.-नीतिगत वादे से आय संरक्षण तक : 2014 से पहले, सीमित खरीद के कारण एम.एस.पी. अक्सर प्रतीकात्मक ही रहता था, लेकिन प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में, एम.एस.पी. को एक वास्तविक आय संरक्षण व्यवस्था के रूप में संस्थागत रूप दिया गया है। 2025 में सरकार ने 14 खरीफ फसलों और सभी अनिवार्य रबी फसलों के लिए एम.एस.पी. में वृद्धि को मंजूरी दी, जिसमें उत्पादन लागत के 1.5 गुना एम.एस.पी. निर्धारित करने के सिद्धांत का सख्ती से पालन किया गया।

दशक भर की तुलना : धान की खरीद (2014-15 से 2024-25) 7,608 लाख मीट्रिक टन तक पहुंच गई, जबकि इससे पिछले दशक में यह 4,590 लाख मीट्रिक टन थी। धान किसानों को एम.एस.पी. भुगतान बढ़ कर 14.16 लाख करोड़ रुपए हो गया, जो 2014 से पहले भुगतान की गई राशि से 3 गुना से अधिक है। 14 खरीफ फसलों के लिए कुल एम.एस.पी. भुगतान 16.35 लाख करोड़ रुपए तक पहुंच गया, जो पहले 4.75 लाख करोड़ रुपए था।

राष्ट्रीय प्राथमिकता के रूप में कृषि : सार्वजनिक निवेश इस रणनीतिक फोकस को दर्शाता है। कृषि एवं किसान कल्याण विभाग के बजटीय आबंटन में भारी वृद्धि हुई है, जो 2013-14 में 21,933.50 करोड़ रुपए से बढ़ 2025-26 में 1,27,290.16 करोड़ रुपए हो गया है।

पालतू पक्षी से मनुष्य में फैलने वाली बीमारियां

यह विश्वास करना मुश्किल है, पर यह सच है कि पालतू पक्षी आपको बीमार कर सकता है। कई ऐसे रोग हैं, जो पक्षियों से मनुष्यों में संचरित होते हैं तथा मनुष्यों में संक्रमण कर उनके स्वास्थ्य के लिए खतरा पैदा करते हैं। अतः ऐसे रोगों को जूनोटिक रोग कहा जाता है। विशेष रूप से बच्चों, बूढ़ों, गर्भवती महिलाओं, कमज़ोर प्रतिरोधक क्षमता वाले व्यक्ति, एच.आई.वी. संक्रमित मनुष्यों में रोगों का प्रकोप अधिक पाया गया है। इसलिए मनुष्य तथा पक्षियों दोनों के स्वास्थ्य के लिए यह समझना महत्वपूर्ण है कि इन बीमारियों के संक्रमण रोगों को कैसे रोकें तथा कौन-कौन सी सावधानी बरती जाए, जिससे इन रोगों से बचा जा सके।

पक्षियों से मनुष्यों में फैलने वाले 60 प्रतिशत से भी अधिक संख्या में संक्रामक रोग है और साथ ही इसकी सूची बढ़ती ही जा रही है। कुछ महत्वपूर्ण संक्रमित रोग इस प्रकार हैं :

1. एवियन इन्फलुएंजा : इसे बर्ड-फ्लू के नाम से जाना जाता है। यह H5N1 विषाणु से होता है। यह रोग मनुष्यों में गंभीर होने के साथ-साथ घातक भी हो सकता है। इसमें उच्च बुखार, खांसी, श्वसन समस्याएं, मांसपेशियों में दर्द आदि लक्षण मनुष्यों में होते हैं।

2. एवियन ट्यूबरकुलोसिस : यह रोग माइक्रोबैक्टीरियम एवियम जीवाणु से होता है। यह जीवाणु संक्रमित पक्षियों के मल-मूत्र से होता है और बाहरी वातावरण, जल, भोजन, वायु आदि को दूषित कर मनुष्यों में संचरित हो जाता है। चूंकि यह रोग इतना गंभीर नहीं है, फिर भी पेट की सूजन, वजन घटना, दस्त, सुस्ती जैसे लक्षण शामिल है।

3. कैंक्कसिडिओसिस : यह एक कवक संक्रमण है, जोकि संक्रमित पक्षियों मुख्यतया कबूतर द्वारा फैलता है। इस रोग का मुंह (थ्रस), आंतों, त्वचा, मूत्रजनन और श्वसन प्रणालियों को प्रभावित करता है।

4. कैम्पाइलोबैक्टीरियोसिस : यह कैम्पाइलोबैक्टर जेंजुनाई जीवाणु संक्रमित पक्षी की आंतों में होता है और मल के द्वारा दूषित भोजन, जल ग्रहण करने पर मनुष्यों में रोग करवाता है। दस्त, उल्टी, कमजोरी, थकावट, वज़न कम होना आदि इसके आम लक्षण हैं।

5. क्रिप्टोकोक्लोसिस : यह एक कवक संक्रमण है, जोकि संक्रमित पक्षियों के मल के माध्यम से वातावरण को दूषित करके मनुष्यों में श्वास द्वारा शरीर में प्रवेश कर रोग उत्पन्न करता है। पहले यह श्वास प्रणाली को प्रभावित करता है और फिर धीरे-धीरे यह तंत्रिका से मस्तिष्क तक पहुंच जाता है। बुखार, खांसी, सीने में दर्द, बलगम में खून आना, सरदर्द, उल्टी, मिचली, चक्र आना, कोमा में चले जाना आदि लक्षण मिलते हैं।

6. जिआर्डिसिस : यह रोग 'जिआर्डिया' परजीवी से होता है, जोकि पक्षी की आंत में रहता है और मल के द्वारा जल-भोजन आदि को संक्रमित कर मनुष्यों में बीमारी करता है, जिसके कारण दस्त, उल्टी, मिचली, वज़न घटना, कमज़ोरी होता है।

7. हिस्टोप्लाज्मोसिस : यह कवक हिस्टोप्लाज्मा कैटसूलेटम से होता है, जोकि संक्रमित पक्षियों के मल से बाहर निकल कर वातावरण को दूषित करता है और मनुष्यों में गंभीर श्वसन रोग पैदा करता है।

8. रानी खेत रोग : यह 'एवियन पैरामाइक्सो' वायरस विषाणु से होता है, जोकि मनुष्यों में संक्रमित पक्षियों के मल के माध्यम से संचरण होता है और श्वसन संबंधित समस्याएं, आंखों में सूजन, जलन तथा लालिमा आदि लक्षण करता है।

9. पाश्चरिलोसिस : यह रोग "पास्चोरेला मल्टोसीडा" जीवाणु से संक्रमित पक्षियों के काटने, खरोंचने या दूषित वायु से फैलता है। इसमें श्वास संबंधी लक्षण दिखते हैं।

10. तोता बुखार : यह "क्लैमाइडिया सिटेसिस" जीवाणु से होता है, जोकि पक्षियों के श्वासनली में रहता है तथा पक्षियों के नाक-मुंह के स्राव द्वारा दूषित धूल-मिट्टी या स्त्राव के सीधे सम्पर्क में आने से मनुष्यों में रोग उत्पन्न होता है। इसमें बुखार, कंपकपी, सरदर्द, बदन दर्द, सूखी खांसी जैसे लक्षण होते हैं।

11. सारकोसिस्टिोसिस : यह रोग सारकोसिस्ट नामक परजीवी से होता है, जोकि पक्षियों की आंतों के भीतर रहता है तथा मल द्वारा दूषित वस्तुओं से मनुष्यों में प्रेषित होकर मिचली, दस्त, उल्टी, पेट दर्द आदि करवाता है। यह रोग विशेष रूप से बुजुर्गों और कमज़ोर व्यक्तियों को ज्यादा प्रभावित करता है।

12. एलर्जी एल्वियोलिटस : इसे 'कबूतर फेफड़ा' रोग भी कहते हैं, यह पक्षियों के पंख की गंदगी से दूषित वायु में श्वास लेने से होता है। यह मुख्य रूप से फेफड़ों को प्रभावित करता है, जिसके कारण सांस लेने में दिक्कत होती है।

रोकथाम एवं नियंत्रण :

* जब भी पक्षियों के साथ खेलें या उनके सम्पर्क में आएं, उसके बाद साबुन से हाथ ज़रुर धोएं।

* पालतू पक्षियों को खरीदने से पहले पक्षियों की अच्छी तरह पशु चिकित्सक से जांच करवा लें और साथ ही पक्षियों की उचित देखभाल की पूरी जानकारी ले लें।

* पिंजरों तथा पक्षियों के मल-मूत्र को साफ करते वक्त डिस्पोजेबल दस्ताने का प्रयोग करें।

* नियमित रूप से पशु-चिकित्सक से पक्षियों की जांच करवाते रहें तथा संक्रमित रोगों को रोकने के लिए टीकाकरण करवाएं।

* पक्षियों के चोंच मारने या खरोंच करने पर, उस प्रभावित जगह को अच्छे से साबुन से धोकर डिटॅाल आदि लगा कर तुरंत पशुचिकित्सक की सलाह लें।

प्रकृति में पाए जाने वाले लाभदायक कीटों में मधुमक्खियों का एक विशेष स्थान है। मधुमक्खियां फसलों में पर-परागण क्रिया द्वारा फसलों की पैदावार में वृद्धि करती है व उत्पाद की गुणवत्ता भी बढ़ा देती है। मधुमक्खी पालन एक ऐसा कृषि आधारित व्यवसाय है, जिसे छोटे किसान व भूमिहीन भी अपना सकते है। लचीला व्यवसाय होने के साथ ही लगातार आमदनी का साधन भी है, जिसके कारण छोटे मधुमक्खी पालक इसे अंशकालिक व बड़े मधुमक्खी पालक इसे पूर्णकालिक व्यवसाय के रूप में अपना सकते है। कम लागत से शुरू होने वाला यह व्यवसाय वर्ष में कई बार आर्थिक लाभ दे सकता है। मधुमक्खी पालन से शहद के अतिरिक्त मोम, परागकण, रायल जैली, मौन विश आदि पदार्थ भी मिलते है, जिनकी राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ार में भारी मांग है।

एक अनुमान के अनुसार भारतवर्ष में पर-परागण के लिए 120 मि. मौनवंशों की आवश्यकता है, जिससे हमें 1.2 मि. टन से अधिक शहद व लगभग 15000 टन मोम प्राप्त हो सकता है तथा 12 लाख लोगों को रोज़गार भी उपलब्ध हो सकता है।

हरियाणा व अन्य प्रदेशों में पाश्चात्य मौन (एपिस मेलीफेरा) का सफल पालन किया जा रहा है, जिससे 50-60 किलोग्राम शहद प्रति वंश प्रति वर्ष मिल सकता है। मधुमक्खी परिवार में तीन प्रकार के सदस्य पाए जाते हैं :-

1. रानी मधुमक्खी : एक छत्ते/बक्से में एक रानी मधुमक्खी, जोकि पूर्ण मादा होती है, 1500-2000 अण्डे प्रति दिन दे सकती है। सामान्यत: एक से डेढ़ वर्ष बाद रानी को बदल दिया जाता है, क्योंकि नई रानी की अंडे देने की क्षमता अधिक होती है।

2. कमेरी मधुमक्खी : यह अपूर्ण मादा होती है, जोकि श्रमिक का काम करती है। इसका जीवनकाल 42 दिन का होता है तथा यह अंडे नहीं दे सकती। कभी-कभी रानी की अनुपस्थिति में या रानी बूढ़ी होने पर कमेरी मधुमक्खी निर्जीव/अनिशेचित अंडे देती है, जिससे केवल नर ही उत्पन्न होते हैं। कमेरी मधुमक्खियों के कार्य का विभाजन आयु के आधार पर होता है।

3. नर मधुमक्खी : एक कालोनी/वंश में नर की संख्या 500 तक हो सकती है। किन्तु ये परिवार का कोई भी कार्य नहीं कर सकते तथा 2 माह तक जीवित रहते हैं। इनका कार्य केवल नई रानी से मिलन का होता है।

मधुमक्खी पालन शुरू करने का सही समय अक्तूबर-नवम्बर माह है, क्योंकि इस समय मौनचर/फूल अधिक संख्या में मिलते हैं। फरवरी-मार्च तक फूलों की बहुतायत बनी रहती है, जिसके कारण भरपूर मात्रा में शहद मिलता है। अच्छा मौनचर मिलने की अवस्था में 50 वंश तक एक स्थान पर रखे जा सकते हैं। किन्तु दो इकाईयों की आपस में दूरी लगभग 2 किलोमीटर की रखनी चाहिए। दो वंशों में 5 फुट की दूरी रहनी चाहिए। मौनालय की स्थापना ऐसे स्थ्धान पर करें, जहां से मौनवंशों को जल्दी हटाने की आवश्यकता ना पड़े, क्योंकि ये एक विशेष प्रकार की गंध छोड़कर व मार्ग में आने वाली वस्तुओं को याद कर अपना मार्ग बना लेती है। मौनवंशों का बदलते मौसम के अनुसार प्रबंध करना, एक महत्वपूर्ण कार्य है। गर्मी के मौसम में फूल कम होने पर चीनी की चाशनी (एक लीटर पानी में 500 ग्राम चीनी) वंशों को दें। मौनवंशों को आटे की पेढ़ी भी दें, जिससे रानी अधिक अण्डे देना शुरू कर देती है व कमेरी मधुमक्खियों की भोजन की आवश्यकता भी पूरी हो जाएगी। सोयाबीन का आटा (250 ग्राम), पाऊडर दूध (150 ग्राम) व शहद को मिलाकर 100 ग्राम की पेढ़ियां बना लें व कागज़ पर रखकर फ्रेमों पर उल्टा रख दें। ध्यान देने योग्य बात है कि शहद केवल उन्हीं चौखटों से निकालें, जिनके तीन-चौथाई कोष्ट बंद हो। इससे शहद लम्बे समय तक खराब नहीं होगा।

मधुमक्खियों के प्रौढ़ व सुंडियों पर कीट व बीमारियों का भी प्रकोप हो जाता है, जिनका प्रबंधन करना अत्यंत आवश्यक है :

1. अष्टपदी/वरोआ योग्यता : मौनवंशों में माईट या चीचड़ी की समस्या गंभीर है। ये शत्रु सुंडियों व प्रौढ़ के शरीर पर चिपक कर उनका खून चूसती है, जिसके कारण शिशुओं का विकास पूरा नहीं होता व पूर्ण प्रौढ़ नहीं बन पाते। यदि प्रौढ़ बन भी जाए, तो उनकी टांगें व पंख पूरी तरह विकसित नहीं हो पाते, ऐसी मधुमक्खियां बक्से के आस-पास रेंगती दिखाई देती हैं।

इनके प्रबंधन के लिए बक्से के तलपट्टे पर चिपचिपा पदार्थ लगा कागज़ रख दें तथा प्रति सप्ताह इसको निकालकर जला दें। इसके अतिरिक्त 5 मिलीलीटर फारमिक एसिड (85 प्रतिशत) का 15 दिन तक धूमण करें। कांच की शीशी में एसिड डालकर उसमें रूईं की बत्ती डाल दें व तलपटे पर रख दें। प्रत्येक प्रात: इस शीशी को निकाल लें व सायं: के समय इसे पुन: भरकर तलपटे पर रख दें।

2. सैक ब्रेड : यह एक विषाणु रोग है, जिसका प्रकोप शिशुओं में कोष्ट बंद होने से पहले हो जाता है। इसमें सुंडी की बाहर की चमड़ी मोटी व भीतर के अंग पानी हो जाते है।

शक्तिशाली वंशों में इस बीमारी का प्रकोप कम पाया जाता है। अत: बक्से में मधुमक्खियों की संख्या पूरी रखें व कालोनी की साफ-सफाई रखें।

3. यूरोपीयन फाउल ब्रुड : यह एक बैक्टीरिया जनित रोग है, जिसमें मधुमक्खी के लारवे/सुंडियां अण्डे में से निकलने के पश्चात् 1-3 दिन में बीमारी से ग्रसित हो जाते है। धीरे-धीरे इनका रंग हल्का भूरा, भूरा व काला पड़ जाता है तथा सूखकर कोष्ठ की तली में पड़े दिखाई देते हैं।

इनके प्रबंधन के लिए टैरामाइसीन 250 या आक्सीटैटरा साईक्लीन 250 मिलीग्राम को 750 मिलीलीटर पानी व एक चम्मच शहद में मिला लें व प्रभावित ब्रूड पर फव्वारे से छिड़कें। दूसरा छिड़काव 7-10 दिन बाद करें। यह छिड़काव शहद निकालने के बाद करें ताकि शहद में अवशेष ना रहने पाएं।

शेष पृष्ठ 6 की

टमाटर की फसल में कीटों और रोगों का समेकित प्रबंधन

बहते हुए रस को चूसते है। इससे ग्रसित पत्तियां सिकुड़ जाती हैं और प्रभावित कलियां गिर जाती है। इस कीट द्वारा टमाटर में रोग फैलने की भी आशंका रहती है। इससे कलियों को काफी नुकसान होता है। यह कीट लगभग 1.5 मिलीमीटर लम्बा, पीले, काले या भूरे रंग का होता है।

प्रबंधन :

* प्रकोप की प्रारम्भिक अवस्था में नीम ऑयल आधारित कीटनाशक की 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करें।

* बेसिलस थूरिनजिएन्सिस (बी.टी.) आधारित कीटनाशक की 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बना कर भी छिड़काव किया जा सकता है।

* थ्रिप्स का अधिक प्रकोप होने पर एसिटामिप्रिड 0.3 मिलीलीटर अथवा फिप्रोनिल 1 मिलीलीटर अथवा लेम्बडा-साइलोथ्रिन 0.5 मिलीलीटर अथवा इमामैक्टीन बैन्जोएट 0.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें।

माहू/एफिड (माइजस पर्सिकी) : इस कीट के शिशु (निम्फ) एवं वयस्क (एडल्ट) हरे रंग के होते हैं। इसकी लम्बाई 2-2.5 मिलीमीटर होती है। इसके प्रौढ़ कीट पंखदार एवं पंखहीन दोनों प्रकार के होते हैं। इसके शिशु (निम्फ) एवं वयस्क (एडल्ट) दोनों ही पत्तियों, फूलों, कलियों तथा मुलायम तनों से रस चूसते है। पौधों का क्षति ग्रसित भाग पीला पड़ने लगता है और ग्रसित पत्तियां सिकुड़ जाती है। प्रभावित पौधे छोटे रह जाते है तथा अधिक प्रकोप होने पर सूख जाते हैं। यह कीट अंडा ना देकर सीधे निम्फ को जन्म देता है, जो लगभग एक सप्ताह में वयस्क हो जाते हैं और निम्फ को जन्म देते है। इस प्रकार बहुत कम समय में इनकी संख्या बढ़ जाती है। इससे फसल को अधिक नुकसान होता है।

प्रबंधन :

* प्रकोप की प्रारम्भिक अवस्था में एजाडिरेक्ट्रीन (नीम एक्सट्रैक्ट कनसनट्रैट) आधारित कीटनाशक की 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करें।

* एफिड का अधिक प्रकोप होने पर इमिडाक्लोप्रिड 0.5 मिलीलीटर अथवा थायोमिथोक्साम 0.5 ग्राम अथवा एसिटामिप्रिड 0.3 मिलीलीटर अथवा फिप्रोनिल 1 मिलीलीटर अथवा कार्बोसल्फॉन 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें।

सफेद मक्खी/व्हाइट फ्लाई (बेमिसिया टेबेकी) : यह रोग सफेद मक्खी नामक कीट से फैलता है। इस रोग का प्रकोप पौध की रोपाई से फसल की कटाई तक होता है। इसके प्रकोप से पत्तियां छोटी, पौधा झाड़ीनुमा, अविकसित, शाखाएं छोटी, पत्तियां मुड़ी, सिकुड़ी व टेढ़ी-मेढ़ी हो जाती हैं। इसके प्रकोप से 50-90 प्रतिशत तक नुकसान होता है। ग्रसित पौधों की बढ़वार रुक जाती है तथा पीले रंग के दिखाई देने लगते है। क्षति ग्रसित पौधों में फूल एवं फल नहीं बनते है।

प्रबंधन : * सफेद मक्खी के प्रकोप की प्रारम्भिक अवस्था में एजाडिरेक्ट्रीन (नीम ऑयल) आधारित कीटनाशक की 2 मिलीलीटर प्रति पानी में घोल बना

कर छिड़काव करें।

* इसके अतिरिक्त एजाडिरेक्ट्रीन (नीम एक्सट्रैक्ट कनसनट्रैट) आधारित कीटनाशक की 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करें।

* सफेद मक्खी का प्रकोप होने पर इमिडाक्लोप्रिड 0.5 मिलीलीटर अथवा थायोमिथोक्सम 0.5 ग्राम अथवा साइएण्ट्रानीलीप्रोली 0.3 मिलीलीटर अथवा डाइफैन्थ्यूरॉन 0.5 ग्राम अथवा फैनप्रोपाथ्रीन 1 मिलीलीटर अथवा फ्लूपाइराडाइफूरोन 1 मिलीलीटर/लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें।

आर्द्र गलन/डैम्पिंग ऑफ (राइजोक्टोनिया सोलेनी, पीथियम एफेनीडरमेटम) : इस रोग का प्रकोप भारी मिट्टी जिसमें जल निकास का उचित प्रबंध ना हो तथा अधिक आर्द्रता एवं तापमान जैसी परिस्थितियों में अधिक होता है। इस रोग के लक्षण मुख्यत: बीज अंकुरण ना होने, अंकुरण के बाद भूमिगत बीजांकुर का विगलन होने और बीजांकुर के भूमि से बाहर निकलने पर पौध गलन होने के रूप में दिखाई देते है। ग्रसित ऊतक मुलायम होकर पानी सोखने लगते है। इससे पौधे मुरझाने लगते है और ज़मीन पर गिर कर नष्ट हो जाते है। इस रोग का प्रकोप मुख्य रूप से पौधशाला (नर्सरी) में होता है। प्रारम्भ में इस रोग के लक्षण कुछ ही स्थानों पर दिखाई देते है। ये दो-तीन दिनों में ही पूरी प्रयोगशाला (नर्सरी) में फैल कर अधिकांश पौधों को क्षति ग्रसित कर देते हैं।

प्रबंधन : * आधुनिक तकनीक के अनुसार किसान दो किलोग्राम ट्राइकोडर्मा + स्यूडोमोनास को 100 किलोग्राम पूर्ण रूप से सड़ी एवं नम गोबर की खाद (कम्पोस्ट) में अच्छी प्रकार मिला लें तथा उसे 15-20 दिनों तक के लिए छाया में पॉलीथीन से ढक कर रखें। इससे ट्राइकोडर्मा + स्यूडोमोनास का कम्पोस्ट में पूर्ण रूप से विकास हो जाता है। अब ट्राइकोडर्मा + स्यूडोमोनास में मिली कम्पोस्ट को फैला कर 15 सैंटीमीटर मोटी परत बना लें तथा उस पर बीज की बुवाई कर नर्सरी तैयार करें। इस विधि से पौधे का विकास भी अच्छा होता है तथा इनमें आर्द्र गलन अथवा पौध गलन रोग का प्रकोप भी नहीं होता।

* कार्बेन्डाज़िम + मैंकोज़ेब की 1-2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बना कर आवश्यकता अनुसार छिड़काव करें। पौधशाला में बीज जमाव के तुरन्त बाद 1 ग्राम की दर से प्रति लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करना उचित होगा, क्योंकि जमाव के तुरन्त बाद पौधे बहुत कोमल होते है।

क्रमश:

दक्षिण भारत में मौसमी बदलाव

असामान्य ठंड से निपटने को जरूरी कारगर रणनीति

दक्षिण भारत में ठंड के मौसम में उत्तरी हवाओं के असामान्य रूप से गहरे प्रवेश के कारण आंतरिक हिस्सों में तापमान में भारी गिरावट आयी। जिसका गंभीर असर पारिस्थितिकी व मानव जीवन पर हो रहा है। इसमें जलवायु बदलाव की बड़ी भूमिका है।

कर्नाटक के हुबली-धारवाड़ में कभी स्वेटर की दुकान नहीं होती थी, आज वहां लोग रूम हीटर खरीद रहे है। यह हाल भीषण गर्मी के लिए मशहूर पूरे उत्तरी-कर्नाटक का है। धारवाड़ में तापमान लगातार 10. 2 डिग्री के आसपास है। इसी तरह, गदग में न्यूनतम तापमान 10.8, बीदर में 10 डिग्री सेल्सियस, हासन में 8 डिग्री सेल्सियस दर्ज किया गया। हासन, विजयपुर के बाजारों में पहली बार जाड़े के कपड़ों की बिक्री जमकर हो रही है। बेंगलुरु में इतनी सर्दी कभी देखी नहीं गई। उधर चेन्नई में सालों बाद 20 डिग्री से नीचे तापमान गया और समुद्र किनारे के इस महानगर के लिए यह कड़ाके की ठंड बन गया। ऊटी तो खैर राज्य का पहाड़ी क्षेत्र है लेकिन वहां भी तापमान 5.3 हो जाना अचरज है। ईरोड के तलवाड़ी में 11.4 डिग्री, डिग्री, धर्मपुरी के कुछ हिस्सों में 15 डिग्री सेल्सियस तापमान दर्ज किया गया। यही हाल आंध्र प्रदेश के कई हिस्सों में है। मौसम का बदलता मिजाज समाज, अर्थव्यवस्था आदि पर दूरगामी प्रभाव डालेगा। जलवायु परिवर्तन के लिए सरकार व समाज को चेत जाना चाहिए।

भारत के दक्षिणी प्रायद्वीपीय राज्यों – तमिलनाडु, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश-तेलंगाना और केरल-को समशीतोष्ण या उष्णकटिबंधीय जलवायु के लिए जाना जाता है, जहां शीत लहर की स्थिति दुर्लभ होती है। हाल के वर्षों में ठंड के मौसम में उत्तरी हवाओं के असामान्य रूप से गहरे प्रवेश के कारण इन क्षेत्रों के आंतरिक हिस्सों में तापमान में भारी गिरावट दर्ज की जा रही है। मौसम विभाग के आंकड़ों के मुताबिक अप्रत्याशित शीत लहर के चलते कई जगह न्यूनतम तापमान सामान्य से 3-5 डिग्री तक नीचे चला गया है। इसका गंभीर असर स्थानीय पारिस्थितिकी प्रणालियों और मानव जीवन पर हो रहा है

भारत के 'सेंटर फॉर स्टडी ऑफ साइंस, टेक्नोलॉजी एंड पॉलिसी' का एक शोध बताता है कि साल 2021-2050 के बीच दक्षिण भारत के कई इलाकों का तापमान 0.5 डिग्री से 1.5 डिग्री तक और सर्दियों में न्यूनतम तापमान एक से दो डिग्री तक बढ़ सकता है। यही नहीं खरीफ और रबी दोनों फसली-मौसम में वर्षा में भी उल्लेखनीय वृद्धि होगी। रिपोर्ट में राज्यों को जलवायु जोखिम मूल्यांकन और लचीली आधारभूत संरचना निर्माण की सलाह दी गई है। बढ़ती मौसम असमानता के कारण बाढ़ के बाद जल-जनित रोग और तापमान उतार-चढ़ाव से श्वसन की समस्याएं बढ़ी है। मौसम की ये प्रवृत्तियां दक्षिण भारत के समाज को नई चुनौती है।

दक्षिण भारत की कृषि मुख्य रूप से उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय फसलों पर निर्भर करती है, जो पाले या अत्यधिक

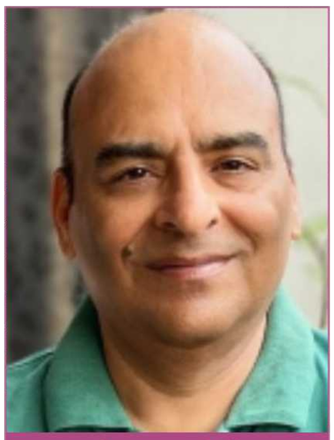

पंकज चतुर्वेदी

ठंड के प्रति अत्यंत संवेदनशील होती है। अप्रत्याशित शीत लहर से फसल को नुकसान और उपज में कमी की प्रबल संभावना होती है। दक्षिण भारत, विशेषकर केरल, कर्नाटक के मलनाड आदि पहाड़ी क्षेत्र और तमिलनाडु के कुछ हिस्सों में कॉफी, चाय और इलायची जैसी बागवानी फसलें उगाई जाती है, जो ठंड के प्रति संवेदनशील है। कर्नाटक के चिकमंगलूर, कोडागु तथा केरल व तमिलनाडु के पहाड़ी क्षेत्रों में तापमान में अचानक गिरावट से पौधों की पत्तियां पाले से क्षतिग्रस्त हो सकती है। विशेषज्ञों के अनुसार, तापमान कम होने से कॉफी के पौधों में पत्ती झुलसने की समस्या हो जाती है। ठंड की मार आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु में केले की फसल पर पड़ने की संभावना है। पाला पड़ने पर पत्तियां पीली पड़ जाती है व फल छोटे रह जाते है। लंबे समय तक ठंड से नारियल व सुपारी के पौधों में विकास रुक जाता है। ऐसा ही असर सब्जी व दालों की खेती पर होगा। कर्नाटक, तमिलनाडु में अचानक शीत लहर के दौरान गायों-भैंसों को बीमारियां तो लगती ही है, शरीर का तापमान बनाए रखने को उन्हें अधिक आंतरिक ऊर्जा खर्च करनी पड़ती है, जिससे दूध पैदावार में 10-20 फीसदी तक की कमी होती है।

आंध्र प्रदेश, विशेषकर कृष्णा और गोदावरी जिलों में झींगा और मछली पालन होता है। तालाबों में जब पानी का तापमान अचानक गिरता है, तो मछली की चयापचय दर कम हो जाती है, वे भोजन खाना बंद कर देती है, और रोगग्रस्त हो जाती हैं। अत्यधिक ठंड में मछलियां मर भी सकती हैं। इसी तरह झींगा फार्मों में पानी का तापमान 20 डिग्री से नीचे जाने पर झींगा का विकास रुक जाता है जिससे किसानों को नुकसान होता है। अचानक जाड़ा पड़ने के साथ ही दक्षिण भारत में बड़ी संख्या में सांस और खांसी के मरीज अस्पताल पहुंच रहे है। चूंकि उनकी जीवनशैली और आवास हल्के मौसम के अनुरूप बने है, अचानक और तीव्र ठंड के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं।

मौसम वैज्ञानिकों की मानें तो दक्षिण भारत में पड़ रही अधिक ठंड अल्पकालिक मौसमी विसंगतियों जैसे - ठंडी हवाओं का गहरा प्रवेश, साफ आसमान, चक्रवात के अप्रत्यक्ष असर का परिणाम है। लेकिन, जलवायु परिवर्तन इस संभावना को बढ़ाता है कि शीत लहर जैसी चरम-मौसम की घटनाएं असामान्य रूप से तीव्र या अप्रत्याशित हो सकती है।

दक्षिण भारत के राज्यों में जलवायु परिवर्तन न केवल औसत तापमान बढ़ा रहा है, बल्कि मौसमी घटनाओं को चरम और अप्रत्याशित बना रहा है। शीत लहर ने उजागर किया है कि आंतरिक कर्नाटक और आंध्र प्रदेश जैसे क्षेत्र अब अत्यधिक ठंड के प्रति असुरक्षित है। दक्षिण भारतीय राज्यों में, जहां बुनियादी ढांचा व जीवनशैली गर्मी और आर्द्रता के अनुरूप बनी है, वहां अप्रत्याशित ठंड से निपटने के लिए सरकारों को बहुआयामी और दूरदर्शी रणनीति अपनाने की जरूरत है।

सर्दी के मौसम में मजबूत होती गेहूं की फसल

सर्दियों का तापमान गेहूं की जैविक जरूरतों के बिल्कुल अनुकूल होता है। ठंडे वातावरण में पौधों की जड़ें गहराई तक फैलती हैं, जिससे वे मिट्टी से पानी और पोषक तत्व बेहतर ढंग से ले पाती हैं।

भारत की खेती में गेहूं एक ऐसी फसल है जिस पर किसान पीढ़ियों से भरोसा करता आया है। यह भरोसा सिर्फ आदत या परंपरा से नहीं बना, बल्कि अनुभव, मौसम की समझ और बाजार की स्थिर मांग से मजबूत हुआ है। रबी मौसम की यह फसल सर्दियों में धीरे बढ़ती है, लेकिन यही धीमी और संतुलित वृद्धि इसे अंदर से मजबूत बनाती है। ठंडी रातें, हल्की धूप और सीमित नमी गेहूं के पौधे को बिना किसी बड़े तनाव के विकसित होने का मौका देती हैं। यही कारण है कि गेहूं की खेती को सर्दी के मौसम की सबसे सुरक्षित और भरोसेमंद खेती माना जाता है।

सर्दी का मौसम क्यों बनाता है गेहूं को मजबूत

सर्दियों का तापमान गेहूं की जैविक जरूरतों के बिल्कुल अनुकूल होता है। ठंडे वातावरण में पौधों की जड़ें गहराई तक फैलती हैं, जिससे वे मिट्टी से पानी और पोषक तत्व बेहतर ढंग से ले पाती हैं। इस मौसम में फसल की वृद्धि भले ही धीमी हो, लेकिन यही धीमी प्रक्रिया दानों को भरपूर वजन और बेहतर गुणवत्ता देती है। इसके अलावा सर्दी में कीट और रोगों का प्रकोप भी सीमित रहता है, जिससे दवाइयों पर होने वाला खर्च कम होता है। इस तरह गेहूं की खेती कम जोखिम और संतुलित लागत का उदाहरण बन जाती है।

मिट्टी और खेत की तैयारी का महत्व

गेहूं बहुत ज्यादा नखरीली फसल नहीं है, लेकिन सही मिट्टी और अच्छी तैयारी मिलने पर यह अपनी पूरी क्षमता दिखाती है। दोमट और बलुई दोमट मिट्टी, जिसमें जल निकास की अच्छी व्यवस्था हो, गेहूं के लिए सबसे उपयुक्त मानी जाती है। जलभराव गेहूं के लिए नुकसानदायक होता है, इसलिए खेत को समतल करना और गहरी जुताई करना जरूरी होता है। जब मिट्टी भुरभुरी और हवादार होती है, तब जड़ें आसानी से फैलती हैं और पौधे मजबूत बनते हैं। ऐसी तैयारी से की गई गेहूं की खेती की शुरुआत से ही बेहतर पकड़ बना लेती है।

बीज चयन और बुवाई का सही समय

अक्सर किसान अच्छी तैयारी और खाद पर तो ध्यान देता है, लेकिन बीज के चुनाव में समझौता कर लेता है। यही गलती बाद में कम अंकुरण और कमजोर फसल का कारण बनती है। प्रमाणित और क्षेत्र के अनुकूल किस्मों का बीज लेने से फसल एकसमान उगती है और रोगों का खतरा भी कम होता है। गेहूं की बोआई का सही समय आमतौर पर नवंबर के पहले पखवाड़े से दिसंबर की शुरुआत तक माना जाता है। समय पर बोआई करने से पौधों को सर्दी का पूरा लाभ मिलता है और दानों का विकास बेहतर होता है। कतारों में बोआई करने से पौधों को समान जगह और पोषण मिलता है, जिससे पूरी गेहूं की खेती संतुलित रूप से आगे बढ़ती है।

पोषण और सिंचाई का संतुलन

गेहूं की अच्छी फसल के लिए संतुलित पोषण बहुत जरूरी है। जरूरत से ज्यादा खाद देने से फसल हमेशा बेहतर नहीं होती, बल्कि कई बार पौधे कमजोर हो जाते हैं। नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश का संतुलित उपयोग जड़ों, तनों और बालियों के विकास को सही दिशा देता है। जैविक खाद मिट्टी की सेहत सुधारती है और लंबे समय तक खेत की उत्पादकता बनाए रखती है।

सिंचाई के मामले में भी संतुलन बेहद जरूरी है। पहली सिंचाई बुवाई के करीब 20 25 दिन बाद बहुत अहम मानी जाती है, क्योंकि इसी समय पौधे की जड़ें मजबूत होती हैं। इसके बाद मौसम और मिट्टी की नमी देखकर सिंचाई करनी चाहिए। अधिक पानी से रोगों का खतरा बढ़ता है और कम पानी से दाने कमजोर रह जाते हैं। सही जल प्रबंधन से गेहूं की खेती में उपज और गुणवत्ता दोनों बेहतर होती हैं।

खरपतवार, रोग एवं फसल की सुरक्षा

गेहूं की शुरुआती अवस्था में खरपतवार सबसे बड़ा खतरा होते हैं। ये पौधों से पोषण और पानी छीन लेते है, जिससे फसल कमजोर हो जाती है। अगर पहले 30 40 दिनों में खरपतवार पर नियंत्रण कर लिया जाए, तो आगे चलकर समस्या काफी हद तक खत्म हो जाती है। समय पर निराई या जरूरत के अनुसार दवा का उपयोग फसल को साफ और स्वस्थ बनाए रखता है।

हालांकि सर्दी के मौसम में रोगों का प्रकोप कम रहता है, फिर भी नियमित निगरानी जरूरी है। संतुलित खाद, सही किस्मों का चयन और जरूरत पड़ने पर उपचार फसल को सुरक्षित रखते हैं। इससे गेहूं की खेती न केवल उत्पादन के लिहाज से मजबूत बनती है, बल्कि पर्यावरण के लिए भी सुरक्षित रहती है।

कटाई, भंडारण और किसान की आय

जब फसल पककर तैयार हो जाती है और बालियां सुनहरी रंग लेने लगती हैं, तब कटाई का सही समय आ जाता है। समय पर कटाई करने से दानों की गुणवत्ता बनी रहती है और नुकसान से बचाव होता है। कटाई के बाद फसल को अच्छी तरह सुखाना और सुरक्षित भंडारण करना जरूरी है, क्योंकि थोड़ी सी नमी भी पूरी मेहनत पर पानी फेर सकती है।

आर्थिक रूप से देखें तो गेहूं की खेती किसान को मानसिक सुकून देती है। इसकी मांग स्थिर है, बाजार तय है और सरकारी खरीद का विकल्प मौजूद रहता है। यही वजह है कि गेहूं की खेती आज भी और आने वाले समय में भी किसान की आर्थिक मजबूती की मजबूत नींव बनी रहेगी।

सर्दी के मौसम में मजबूत होती फसल भारतीय किसान के अनुभव और समझ का सच्चा प्रतिबिंब है। यह खेती सिखाती है कि धैर्य, सही समय और संतुलित फैसले कैसे स्थिर और भरोसेमंद परिणाम देते हैं। सर्दियों का अनुकूल मौसम, गहराई तक जाने वाली जड़ें, रोगों का कम दबाव और तय बाजार गेहूं को सुरक्षित फसल बनाते हैं। जब किसान मिट्टी की तैयारी, सही बीज, पोषण और सिंचाई में संतुलन रखता है, तब गेहूं की खेती न केवल बेहतर उपज देती है बल्कि लागत और जोखिम को भी सीमित करती है। बदलते मौसम और बढ़ती चुनौतियों के बीच भी गेहूं की खेती किसान को आत्मविश्वास देती है। यह तेज मुनाफे का वादा नहीं करती, लेकिन स्थिर आय, निरंतर मांग और सुरक्षित भविष्य की मजबूत नींव जरूर रखती है।

देश में 44 हज़ार से ज्यादा एफ.पी.ओ.

किसानों की कंपनियां : एक करोड़ रुपए से ज्यादा टर्नओवर वाले 1100 एफ.पी.ओ.

मध्य प्रदेश के झाबुआ ज़िले के पेटलावद में घर और खेती का कामकाज निपटाकर 30 किसान महिलाएं अपनी कंपनी की मीटिंग कर रही हैं। चौंकिए मत! इन्होंने मिलकर 'फार्मर्स प्रोड्यूसर्स ऑर्गेनाइजेशन' (एफ.पी.ओ.) बनाया है। ये आम कम्पनियों की तरह ही काम करते हैं। इनमें भी बोर्ड ऑफ डायरैक्टर्स होते हैं। समय-समय पर बोर्ड मीटिंग्स होती हैं। एफ.पी.ओ. छोटे किसानों का समूह है, जो मिल कर अपनी फसलों, बीज, खाद से जुड़े फैसले लेते हैं। मार्केटिंग करते हैं, ताकि उन्हें बेहतर दाम मिले। देश में 44 हज़ार से ज्यादा एफ.पी.ओ. रजिस्टर्ड हैं। इनमें 30 लाख से ज्यादा किसान मिलकर काम कर रहे हैं। इनमें से 40 प्रतिशत महिलाएं हैं। वहीं, देश में 800 ऑल वुमन एफ.पी.ओ. हैं। कृषि एवं किसान कल्याण विभाग की रिपोर्ट के अनुसार, 2025 में 1100 एफ.पी.ओ. ऐसे हैं, जिनका टर्नओवर एक करोड़ रुपए से ज्यादा है।

सोमेश्वरनाथ किसान उत्पादक संगठन ने ड्रोन के इस्तेमाल से उत्पादन बढ़ाया है।

एफ.पी.ओ. की सफलता की तीन कहानियां

1. *ऑल वुमन एफ.पी.ओ. :* **वेस्ट एग्री प्रोडक्ट से कमाई हो रही :** झाबुआ-अलीराजपुर में अलसी उगाने वाली महिलाएं इसका तना कूड़ा समझती थीं। फिर महिलाओं के इन समूहों से कैनवालूप ने स्टेम खरीदना शुरू किया। 2025 में कैनवालूप ने 2.9 लाख किसानों से यह वेस्ट खरीदा।
2. *लाइटहाउस एफ.पी.ओ. :* **साथ काम किया, आय 32 प्रतिशत बढ़ी :** टैक्नोलॉजी का इस्तेमाल कर मिसाल बनने वाले, लाइटहाउस एफ.पी.ओ. कहलाते हैं। बिहार में एक हज़ार किसान, सोमेश्वरनाथ किसान उत्पादक संगठन के सदस्य हैं। इस समूह ने 2025 में 1.29 करोड़ रुपए की कमाई की।
3. *ट्राइबल एफ.पी.ओ. :* **जनजातीय क्षेत्रों में आय बढ़ी :** तेलंगाना में प्रजा मित्र रायतू फाउंडेशन महुआ के फूल से लड्डू बनाती है। महिलाओं ने मिलकर मार्केटिंग की, तो उनकी कमाई बढ़ी। स्टडी बताती है - किसानों के मिलकर मार्केटिंग करने से 10-20 प्रतिशत आय बढ़ती है।

कृषि एवं कृषि संबंधित विषयों पर आधुनिक जानकारी लेने हेतु पढ़ें
खेती संदेश
हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र

कृषि एवं कृषि सहायक धंधों की आधुनिक जानकारी से भरपूर

एक वर्ष में 52 अंक
किसान भाईयों व डीलर/डिस्ट्रीब्यूटरों के लिए
चंदों में विशेष छूट
एक वर्ष 400/- रुपए
दो वर्ष 700/- रुपए
पेमेंट करने के पश्चात् अपना डाक पता इस नंबर पर भेजें :
90410-14575
KHETI DUNIYAN
TID - 62763351
चंदे भेजने हेतु QR कोड सकैन करें।
खेती संदेश (कृषि साप्ताहिक)
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड, पटियाला

2025 में रिकॉर्ड कृषि उत्पादन; 2026 में बीज एवं कीटनाशक विधेयकों का इंतजार

अमेरिकी शुल्क से कृषि निर्यात में बाधा पैदा होने के बावजूद भारत के कृषि क्षेत्र ने 2025 का समापन पिछले वर्ष के 35.773 करोड़ टन (एम.टी.) से ज्यादा रिकॉर्ड खाद्यान्न उत्पादन के अनुमान के साथ किया, जबकि जी.एस.टी. सुधारों ने कच्चे माल की लागत में राहत प्रदान की। हितधारक अब नए साल में महत्वपूर्ण बीज और कीटनाशक विधेयकों के पारित होने की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

अधिकारियों ने कहा कि इस साल मज़बूती और कमज़ोरी दोनों

देखने को मिली, गुड्स एंड सर्विसिज टैक्स (जी.एस.टी.) की दरों में कटौती से लागत में काफी बचत हुई, जबकि अमरीकी शुल्क ने बाज़ार में विविधता लाने के लिए मजबूर किया।

कृषि सचिव देवेश चतुर्वेदी ने कहा कि, "हमें उम्मीद है कि हम इस वर्ष 2025-26 (जुलाई-जून) में रिकॉर्ड खाद्यान्न उत्पादन हासिल करेंगे। खरीफ की पैदावार सकारात्मक बनी हुई है और रबी की बुवाई अच्छी तरह से जारी है।"

मौनसून ने बढ़ाया उत्पादन, खरीफ में नया रिकॉर्ड

दक्षिण-पश्चिम मौनसून के सामान्य से ज्यादा रहने की खरीफ की बुवाई को बढ़ावा मिला। कृषि मंत्रालय के प्राथमिक अग्रिम अनुमान के अनुसार 2025-26 के लिए खरीफ खाद्यान्न उत्पादन रिकॉर्ड 17.333 करोड़ टन रहने का अनुमान है, जो 2024-25 में 16.94 करोड़ टन था। चावल और मक्का का उत्पादन बढ़िया होने का अनुमान है।

रबी बुवाई में तेज़ी, गेहूं और दालों का रकबा बढ़ा

रबी की बुवाई 19 दिसम्बर तक 659.39 लाख हैक्टेयर तक पहुंच गई, जो पिछले वर्ष की तुलना में 8 लाख हैक्टेयर ज्यादा है। गेहूं की बुवाई 300.34 लाख हैक्टेयर से 301.63 लाख हैक्टेयर में हुई, जबकि दालों की बुवाई 123.02 लाख हैक्टेयर से बढ़कर 126.74 लाख हैक्टेयर में की गई।